अंतस

अर्धवार्षिक पत्रिका, अंक-द्वादश, 15 अगस्त, 2017

बदलता भारत

Hkkjrh; çk|kfxdh laLFkku dkuiqj

नियम-निर्देश

- अंतस के आगामी अंक में प्रकाशन हेतु अपनी मौलिक एवं यथासंभव अप्रकाशित रचनाएं भेजने का कष्ट करें।
- रचनाएं यथासंभव टाइप की हुई हों, रचनाकार का पूरा नाम, पद एवं संपर्क विवरण का उल्लेख अपेक्षित है।
- लेखों में शामिल छाया-चित्र तथा आँकड़ों से संबंधित आरेख स्पष्ट होने चाहिए। प्रयुक्त भाषा सरल, स्पष्ट एवं सुवाच्य हिंदी भाषा हो।
- अनुदित लेखों की प्रामाणिकता अवश्य सुनिश्चित करें। अनुवाद में सहायता हेतु संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ से संपर्क कर सकते हैं।
- प्रकाशन के लिए किसी भी लेखक को किसी प्रकार का मानदेय नहीं दिया जाएगा।
- अंतस में उन सभी प्रकार के विचारों का स्वागत होगा जो संस्थान परिसर में रहने वाले अथवा काम करने वाले लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं किन्तु किसी भी प्रकार के राजनीतिक विचारों को प्रोत्साहित नहीं किया जाएगा।
- अंतस में प्रकाशित रचनाओं में निहित विचारों के लिए संपादक मंडल अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ उत्तरदायी नहीं होगा और इसके लिए पूरी की पूरी जिम्मेदारी स्वयं लेखक की ही होगी।
- रचनाएँ अंतस के अनवरत दो अंकों में प्रकाशित न होने की स्थिति में संबंधित रचनाकार राजभाषा प्रकोष्ठ में श्रीमती सुनीता सिंह से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

स-आभार

संपादक मंडल

अंतस परिवार

संरक्षक
प्रोफेसर इन्द्रनील मान्ना
निदेशक

परामर्शदाता
प्रोफेसर मणीन्द्र अग्रवाल
उपनिदेशक

श्री कृष्ण कुमार तिवारी
कुलसचिव

मुख्य संपादक
डॉ. कांतेश बालानी

संपादक
डॉ. वेदप्रकाश सिंह

संपादन सहयोग
प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा
प्रोफेसर भारत लोहनी
प्रोफेसर शिखा दीक्षित
डॉ. अनुराग त्रिपाठी
डॉ. अर्क वर्मा
श्री चन्द्र प्रकाश सिंह
श्री विष्णु प्रसाद गुप्ता

अभिकल्प (Design), संकलन
सुनीता सिंह

अनुवाद
श्री जगदीश प्रसाद
श्री भारत देशमुख

छायाचित्र
श्री रवि शुक्ल

सहयोग
विद्यार्थी, हिंदी साहित्य सभा

संकेतक

शुभेच्छा
निदेशक की कलम से 2
उपनिदेशक की दृष्टि में 3
कुलसचिव का संदेश 4
सम्पादकीय 5

रिपोर्ट – 50 वाँ दीक्षान्त समारोह 6
गुरुदक्षिणा – प्रो. चन्द्रलेखा सिंह 9

साहित्य–यात्रा
भारत बदल रहा है ! धीरज रखें !! 11
भारतीय साहित्यः एक महासागर 16
भारत बदल आया हूँ मैं (कविता) 18
जिन्दगी (कविता) 18
साहित्यिक विधा - गजल 19
राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में हिन्दी 22
मैं यूँ तेरी आहट (कविता) 24
जल कण (गद्य-काव्य) 25
आलस्य - भक्त 26
बदलता भारतः एक दृष्टि 31
टूटा तार (कविता) 32
बदलते भारत की आहट 33
प्रगति पर देश हमारा है (कविता) 35
क्यों अपने ही घर से निकलने में सकुचाती हो (कविता) 35
भारत बदल रहा है (कविता) 36
भारत बढ़ रहा है (कविता) 36
जिन्दगी 37
देखो ! बदल रहा है भारत 41
गौ - ग्रास 43
अँधेरे से पहले (कहानी) 49

परिचय
एडवांस इमेजिंग सेन्टर 29

50वाँ दीक्षान्त समारोह
छायाचित्र 30

बालबत्तीसी
फकीर की सीख (लघु कथा) 38
खेल-खेल में सीखें हिन्दी 39

स्वास्थ्य – चर्चा
बदलता भारतः स्वास्थ्य विश्लेषण 42

तकनीकी लेख
नाल ने बदल दी घोड़े की चाल 44
प्रकाश के चमत्कार से कैंसर का निदान 46

कार्यालयीन टिप्पणियाँ

शुभेच्छा

निदेशक की कलम से

मैं हमेशा से कहता आया हूँ कि परिवर्तन संसार का नियम है जिससे हम सभी बँधे हैं। हम हिन्दुस्तान की ही बात करें, इसके अतीत एवं वर्तमान पर गौर करें तो हम पाते हैं कि सभी क्षेत्रों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। चाहे वह शिक्षा का क्षेत्र हो अथवा सामाजिक रहन-सहन, रीति-रिवाजों, हमारी पौराणिक मान्यताओं, धार्मिक क्रिया-कलापों और विज्ञान व तकनीक की दुनिया हो, हमें हर जगह गुणात्मक बदलाव दिखाई देता है। बदलाव का प्रभाव देशकाल, स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है। मुझे लगता है कि परिवर्तन के लिहाज से यद्यपि यह हमारा संक्रमण काल है लेकिन मैं आशा करता हूँ कि यह परिवर्तन सार्थक दिशा में सतत् होता रहेगा।

मुझे प्रसन्नता है कि अंतस का यह बारहवाँ अंक भारत के परिवर्तन की पृष्ठभूमि को लेकर प्रस्तुत किया जा रहा है। अंतस से जुड़े अपने सभी सहयोगियों को मैं स्वतंत्रता-दिवस की बधाई देता हूँ और उनसे अपेक्षा करता हूँ कि अंतस को वे उत्तरोत्तर प्रगति पथ पर बढ़ाते जायेंगे।

इ. मान्ना 15.07.2017

इन्द्रनील मान्ना

निदेशक

शुभेच्छा

उपनिदेशक की दृष्टि में

किसी भी क्षेत्र में सफलता के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति तथा कड़ी मेहनत की जरूरत होती है जिसके लिए हम कृतसंकल्प हैं। हमारे संस्थान की साहित्यिक पत्रिका अंतस का यह द्वादश अंक आपको प्रस्तुत करते हुए मुझे हर्ष की अनुभूति हो रही है। मुझे लगता है कि अभी तक पत्रिका एक-एक सोपान पार करके उत्तरोत्तर प्रगति की ओर जा रही है। यह अच्छा संकेत है क्योंकि ठहराव विकास को बाधित कर देता है। पिछले कुछ अंकों से पत्रिका तयशुदा थीम पर प्रकाशित की जा रही है। अंतस के इस अंक का शीर्षक है "बदलता भारत" जो सामयिक किन्तु अत्यन्त वृहद् विषय है। वर्तमान भारत एक नई उड़ान भरने के लिए लॉचिंग पैड पर चढ़ चुका है। चाहे वो बाज़ारवाद की दुनिया हो या विज्ञान का क्षेत्र हो। भारत के समूचे परिवेश में दीर्घगामी परिवर्तन हो रहे हैं। मेरा मानना है कि प्रत्येक नागरिक को इस बदलाव में अपने दायित्व का ईमानदारी से निर्वाह करना चाहिए। यदि हम ऐसा कर सके तो समाज को एक अच्छी दिशा दे पाएंगे।

आप सभी को स्वतंत्रता-दिवस की हार्दिक बधाई!

धन्यवाद!

मणीन्द्र

मणीन्द्र अग्रवाल
उपनिदेशक

कुलसचिव का संदेश

सर्वप्रथम तो मैं अंतस परिवार तथा उसके सहयोगियों एवं पाठकों से अपनी प्रसन्नता व्यक्त करना चाहता हूँ कि अंतस के माध्यम से मुझे उन सबसे जुड़ने का अवसर मिल रहा है। मुझे बताया गया है कि अंतस के इस द्वादश अंक की मुख्य विषय-वस्तु ''बदलता भारत'' पर केन्द्रित है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर में मैंने कुलसचिव के पद पर इसी वर्ष मार्च माह में कार्यभार ग्रहण किया है तथा इन चन्द माह की अपनी व्यस्तता में भी मैंने अंतस के एकाधिक अंकों पर नजर डालने का समय निकाला है। मुझे कहने में कोई संकोच नहीं है कि संस्थान की इस साहित्यिक पत्रिका से मैं प्रभावित हुआ हूँ।

मानव समुदाय की अनेकानेक इकाइयों के मिलन से ही समाज को आकार मिलता है जिसमें ये सभी इकाइयाँ समाज के विकास में अपनी तरह से अपना - अपना योगदान देती हैं। समयानुसार परिवर्तन के अनुरूप उसमें उनके योगदान की भूमिका भी तद्नुसार बदलती रहती है। आम मान्यता है कि समाज जड़ होता है किन्तु यदि हम अपने अतीत पर दृष्टिपात करें तो हमें प्रत्यक्ष दिखाई देता है कि समाज तथा देश में अलग-अलग क्षेत्रों में तब से अब तक कितना कुछ बदल गया है और हमारा समाज, हमारा देश या कहें सारा विश्व, कहाँ पहुँच गया है। इस परिवर्तन के हम सब भी साक्षी हैं जिसमें हमारा संस्थान भी अपने उच्च शिक्षण स्तर एवं शोध आदि के माध्यम से यथाकिंचित योगदान करने में लगा है।

मेरी कामना है कि परिवर्तन को गति देने में हमारा भी अधिकाधिक योगदान रहे किन्तु साथ में हमारा यह प्रयास भी होना चाहिए कि यह परिवर्तन सार्थक दिशा में रहे। मैं 'अंतस' की निरन्तर प्रगति की भी कामना करता हूँ।

कृष्ण कुमार तिवारी
कुलसचिव

शुभेच्छा संपादकीय

बदलते समय के झरोखे से यूँ एक बूढ़े ने बाहर देखा तो कुछ नया सा लगा। झुर्रियों से भरे चेहरे की उन आँखों पर जैसे चमक सी आ रही थी। अंतस के बदलाव की लहर यूँ तरंगों सी झूमकर शरीर छू, कपकपी-सी पैदा कर रही थीं।

प्रो. चंद्रलेखा जी का गुरुदक्षिणा लेख उनके सेवाभाव एवं समर्पण, सामाजिक मुद्दों के समाधान के लिए उन्हें भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर से जोड़ता है। प्रो. मिनी चन्द्रन जी का भारतीय साहित्य का महासागर प्राकृत एवं संस्कृत रचना के आधार स्तंभों पर रोशनी डालता है। उनका लेख भारतीय लेखों का फारसी एवं अंग्रेजी भाषा का स्वागत कर उसे सहज ही स्वीकार करने को दर्शाता है। उन्होंने ये भी बताया है कि तमिल में संगम साहित्य की छोटी-छोटी कविता भी गहरी भावनाओं को भली-भाँति अभिव्यक्त करती हैं। जनसाधारण सर्वस्वीकार्य संस्कृत का अलग रूप भी खुद में अथाह सागर है जो एक जननी की तरह सब स्वयं मे समा लेने की क्षमता रखता है । श्रीमती ममता शर्मा जी का 'अंधेरे से पहले' लेख समय मे गुजरती जिंदगी और समय में पनपती उन यादों के खजाने को बखूबी दर्शाता है । ढलती हुई उम्र का उन-उन यादों से जो फिर से एक बच्चे को देखते हुए अपना बचपन याद करा उन्हे अपने माँ-बाप से जोड़ देते हैं, को काफी सुंदर तरीके से व्याख्यित किया है। प्रो. एच सी वर्मा जी का 'जल कण' भी उस सागर में गोते लगाते अपने अस्तित्व की चरमसीमा में विलीन हो, संतुष्टि की अनुभूति व्यक्त कर रहा है। श्री जयन्त बिस्वास जी का एडवांस इमेजिंग केन्द्र पर लेख परिष्कृत उपकरणों से अवगत कराता है जो कि भा.प्रौ.सं.कानपुर को विश्व स्तरीय अनुसंधानो में उच्चतर स्थान दिलाता है। प्रो. असीमा प्रधान जी का 'प्रकाश का चमत्कारः कैंसर का प्रारम्भिक अवस्था में निदान' में प्रकाश के तरंगदैर्ध्य को अभिव्यक्त करते हुए उसे तकनीक से जोड़ा गया है। उनकी प्रयोगशाला में एक तकनीकी उपकरण का प्रारूप तैयार कर उससे गर्भाशय कैंसर की प्रारंभिक अवास्था पता लगाई जा सकती है। उनकी इस डिजाइन के लिए उनके शोध समूह को गांधियन यंग टेकनोलोजिकल इनोवेशन पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। बाबू गुलाबराय जी का 'आलस्य भक्त' तर्क देते हुए आलस्य को जीवन का असली सुख बताते हैं...यहाँ तक की उनका यह व्यंग्य आलस्य भक्तों को शांति-स्थापनकर्ता पुरस्कार देने की सिफारिश करता है। श्री गोड़िया जी 'बदलते भारत की आहट' में ऑपरच्युनिटी स्कूल के प्रतिरूपण एवं माँ गंगा के शुद्धिकरण पर लेख प्रस्तुत किया गया है। श्रीमती रीता सिंह जी ने अपने लेख 'नाल ने बदल दी घोड़े की चाल' में सामाजिक रूप से प्रासंगिक कार्यों के इस्तेमाल में तकनीक का उपयुक्त प्रयोग दर्शाया है। डॉ आर के जायस जी का स्वास्थ्य विश्लेषण बदलते रहन-सहन को बखूबी प्रस्तुत करते हुए जीवन में तनाव आने के कारण बतलाता है। विशेष रूप से यह लेख आजकल की जीवन-शैली जीते हुए स्वस्थ रहने के तरीके भी आगाज करता है।

डॉ. वेदप्रकाश सिंह जी का लेख 'भारत बदल रहा है! धीरज रखें!!' उनका लेख यकीन दिलाता है कि भारत अब प्रगति के मार्ग पर अग्रसर है, परंतु इस नई व्यवस्था को थोड़ा समय प्रदान करने का निवेदन करता है। यह लेख बड़ी ही चतुरता से समा बांधता है और भारत की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सकारात्मक भूमिका, वैज्ञानिकों के योगदान, टेक्नालजी से चलती प्रतिदिन की चालिका, एवं महिला-पुरुष समानता को एक बदलते भारत का सूचक दर्शाता है। श्रीमती रत्ना पाल जी का 'जिंदगी का लेख' जीवन चक्र को सुन्दरता से प्रस्तुत करता है। बदले भारत का नजरिया प्रो.ए के शर्मा जी की कलम से बदलाव को दर्शाता है एवं सबको आशावादी रहने की सलाह देता है। वो चाहे फिर बूढ़ी आंखों का अनुभव हो या फिर युवा की शक्ति या चाहे नन्ही सी जान की मासूमियत, बदलाव जीवन का अभिन्न अंग है। इस बहाव के संग चलते रहना ही जिंदगी है। एक सकारात्मक सोच एवं अपने देश के लिए सर्वनिष्ठा से कार्य, निस्संदेह हर व्यक्ति को संतुलित एवं संतुष्टि प्रदान कर, विश्व-स्तर में सबसे उपर स्थान दे, उन्नत भारत अभियान को सार्थक करेगा।
आप सभी को स्वतंत्रता दिवस की हार्दिक बधाई!

डॉ कांतेश बालानी
मुख्य संपादक

रिपोर्ट

50 वाँ दीक्षान्त समारोह 2017

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर राष्ट्रीय महत्व का एक संस्थान है। अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप यह संस्थान देश-विदेश में जाना पहचाना जाता है। संस्थान में पढाए जाने वाले उच्च्य स्तरीय पाठ्यक्रमों, मौलिक अनुसंधानों एवं उत्कृष्ट शिक्षण पद्धति को देश-विदेश में मान्यता प्रदान की जाती है। संस्थान में अध्ययनरत विद्यार्थी अपनी मेधा के बल पर संपूर्ण विश्व में परचम लहराते हैं । संस्थान गुरू-शिष्य परम्परा का पालन करते हुए अपने विद्यर्थियों को उनकी अनिवार्य शिक्षा समाप्त होने के पश्चात उपाधियां प्रदान करता है तथा उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता है।

शिक्षा और दीक्षा को एक ही मंच से सम्मान प्रदान करने के उद्देश्य से दिनांक 15 एवं 16 जून, 2017 को संस्थान के ऑडीटोरियम में 50 वें दीक्षान्त समारोह का आयोजन किया गया। दिनांक 15 जून, 2017 को समारोह के प्रथम सत्र में पूर्व स्नातक (यू.जी.) पाठ्यक्रमों के छात्रा-छात्राओं को उपाधियां एवं मेडल प्रदान किये गये । टाटा संस के चेयरमैन श्री एन चन्द्रशेखरन बतौर मुख्य अतिथि इस सत्र में उपस्थित हुए तथा संचालक मंडल के सदस्य प्रोफेसर पी बलराम ने समारोह की अध्यक्षता की। दीक्षान्त समारोह की औपचारिकताओं के साथ इस सत्र का शुभारंभ हुआ। तत्पश्चात शनैः शनैः यह समारोह आगे बढ़ता गया । प्रथम सत्र के दौरान पूर्व स्नातक (यू.जी.) पाठ्यक्रमों के कुल 948 विद्यार्थियों को उपाधियां प्रदान की गई । प्रथम सत्र में उपाधियां प्राप्त करने वाले छात्र एवं छात्राओं की संख्या निम्नलिखित सूची में दर्शाई गई है।

बी.टेक.	बी.एस.	बी.टी-एम.टी	डबल मेजर	बी.एस.एम.एस	बी.टी. एम.एस	बी.एस.एम.बी.ए.	बी.टी.एम.बी.ए	एम.एस.पी.डी	एम.एस.सी (एकीकृत)	एम.एस.सी (द्विवर्षीय)
515	72	142	12	62	05	01	–	10	02	127
									कुल	948

दीक्षान्त समारोह के दूसरे सत्र में 16 जून 2017, को परास्नातक (पी.जी.) पाठ्यक्रमों के छात्र एवं छात्राओं को उपाधियां प्रदान की गई । इस सत्र में नेशनल अकादमी ऑफ इंजीनियरिंग, यू.एस.ए. के अध्यक्ष डॉ. क्लेटन डेनियल मोट (जूनियर) ने मुख्य अतिथि के रूप में शिरकत की तथा संचालक मंडल के सदस्य प्रोफेसर गिरीश चन्द्र त्रिपाठी ने इस समारोह की अध्यक्षता की । सत्र के दौरान कुल 436 छात्र एवं छात्राओं को परास्नातक की उपाधियां तथा 160 विद्यार्थियों को विद्या-वाचस्पति (पीएचडी) की उपाधियां प्रदान की गई । समारोह में प्रोफेसर मृगांक सुर, सुश्री पी.टी. उषा, प्रोफेसर अजय कुमार सूद एवं प्रोफेसर एम एस स्वामीनाथन को विज्ञान-वाचस्पति की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया ।

द्वितीय सत्र में उपाधियां प्राप्त करने वाले छात्र एवं छात्राओं की संख्या निम्नलिखित सूची में दर्शाई गई है।

डी.आई.आई.टी.	वी.एल.एफ.एम.	एम.बी.ए.	एम.डी.ई.एस.	एम.ई.एम.	एम. फिल.	एम.टेक.	पीएच.डी.
–	40	33	24	–	–	339	160
						कुल	596

रिपोर्ट

दीक्षान्त समारोह के अवसर पर संस्थान के प्रतिभावान विद्यार्थियों को विशिष्ट पुरस्कारों एवं मेडल से सम्मानित किया गया। पुरस्कार एवं मेडल प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों के नाम निम्नलिखित हैं:

- प्रेसीडेन्ट गोल्ड मेडलः श्री संसित पटनायक, यांत्रिक अभियांत्रिकी विभाग
- डायरेक्टर गोल्ड मेडलः श्री नवनीत कश्यप, सिविल अभियांत्रिकी विभाग
- डायरेक्टर गोल्ड मेडलः श्री पल्लव गोयल, गणित एवं साइन्टिफिक कम्प्यूटिंग
- रतन स्वरूप स्मृति पुरस्कारः सुश्री रिचा अग्रवाल, पदार्थ विज्ञान एवं अभियांत्रिकी
- केडेन्स गोल्ड मेडलः श्री राहुल शर्मा, विद्युत अभियांत्रिकी विभाग
- केडेन्स गोल्ड मेडलः सुश्री चंचल, फोटोनिक्स विज्ञान एवं अभियांत्रिकी
- द्विवर्षीय मास्टर्स प्रोग्राम गोल्ड मेडलः श्री विग्नेश्वरन के, वांतरिक्ष अभियांत्रिकी विभाग

पचासवें दीक्षान्त समारोह के अवसर पर विशिष्ट अतिथियों एवं मानद उपाधि प्राप्त करने वाले व्यक्तियों ने अपने जीवन से जुड़े हुए अनुभव, प्रेरक एवं रोचक प्रंसग सुनाए तथा विद्यार्थियों को उनके उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाएं दीं। संस्थान के निदेशक प्रोफेसर इन्द्रनील मान्ना ने समारोह के अंत में विद्यार्थियों, संकाय सदस्यों एवं अभिभावकों का आभार व्यक्त किया तथा उपाधि प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं के उज्ज्वल भविष्य की कामना की। तत्पश्चात राष्ट्रगान के साथ दीक्षान्त समारोह 2017 का समापन हुआ।

राजभाषा प्रकोष्ठ
भा.प्रौ.सं.कानपुर

50th
CONVOCATION
५०वां दीक्षान्त समारोह
15th and 16th JUNE, 2017
१५ एवं १६ जून, २०१७
Indian Institute of Technology, Kanpur
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर

गुरुदक्षिणा

प्रोफेसर चन्द्रलेखा सिंह

महान वैज्ञानिक एवं भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए पी जे अब्दुल कलाम कहा करते थे कि "सपने तब सच होते हैं, जब हम सपने देखना शुरु करते हैं तथा सपने को मूर्त रूप देना व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर निर्भर होता है।" इसी व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बल पर यदि कोई व्यक्ति समाज के उत्थान के लिए आगे आता है, तो वह समाज में एक आदर्श प्रस्तुत करता है। हमारे संस्थान के पूर्व-छात्र और साथ ही देश के आईआईटी सिस्टम से पढ़कर निकलने वाले हमारे पूर्व-छात्र संप्रति पूरी दुनिया में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा रहे हैं और साथ ही अपनी मातृसंस्था एवं समाज के प्रति अपने दायित्वों को निभा रहे हैं। जब हृदय का हृदय से मेल होता है तभी किसी के प्रति श्रद्धा अकारण पैदा होती है और इसी श्रद्धा से गुरु के प्रति आदर भाव पैदा होता है। गुरु की महिमा को सुशोभित करने वालों की कतार में अनेक नाम हैं जिन्हें हम अंतस के नियमित मंच 'गुरुदक्षिणा' में शामिल करते हैं। ऐसे ही विद्यार्थियों में प्रो. चन्द्रलेखा सिंह का परिचय आपसे कराने जा रहे हैं जिन्होंने अपनी उदारता एवं विशेष रूप से दानशीलता से समाज में एक प्रेरणा बनने का काम किया है। प्रो. चन्द्रलेखा सिंह भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड्गपुर से स्नातक हैं और वर्तमान में पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय में भौतिकी की प्राध्यापक हैं। हम अपनी लेखनी के माध्यम से उनके जीवन से जुड़े पक्षों, विचारों एवं अनुभवों को आप तक पहुँचा रहे हैं।

प्रो. चन्द्रलेखा सिंह का जन्म एक अनुशासित एवं कर्मनिष्ठ परिवार में हुआ। आपके पिता श्री हरिहर प्रसाद सिंह भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारी रहे तथा सरकारी आदेशानुसार उन्हें नियमित अंतराल में स्थानांतरित होना पड़ता था। पिता के आदर्शों तथा महात्मा गाँधी के जीवन-दर्शन से प्रेरित प्रो. चन्द्रलेखा सिंह एवं उनकी बहन ने पटना में रहकर अपनी हायर सेकेण्डरी की पढ़ाई पूरी की। समय के साथ उनमें स्वयं निर्णय लेने की क्षमता का विकास हुआ। विद्यालय से शिक्षा पूरी करने के बाद उनकी मेधा की असली परीक्षा तब आरंभ हुई जब उन्हें आईआईटी खड्गपुर में भौतिकी विषय में पाँच वर्षीय पाठ्यक्रम में प्रवेश मिला। प्रो. सिंह ने अपने मेधा के साथ न्याय करते हुए देश के प्रतिष्ठित प्रौद्योगिकी संस्थान खड्गपुर से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने सन् 1988 में अमेरिका के कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय से भौतिकी में विद्यावाचस्पति की उपाधि प्राप्त की और इलिनॉय विश्वविद्यालय, अर्बाना शेम्पेन से पोस्टडॉक किया। संप्रति प्रो. चन्द्रलेखा सिंह पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय में भौतिकी एवं खगोल-शास्त्र विभाग में प्राध्यापक के रूप में अपनी सेवाएं दे रही हैं और इसी विश्वविद्यालय के विज्ञान-शिक्षा अनुसंधान केन्द्र की निदेशक भी हैं। भौतिक

विज्ञान के क्षेत्र में शिक्षण एवं अध्ययन प्रणाली को उन्नत करने के उद्देश्य से आपने अनुसंधान किये हैं। आपके पति श्री जेरेमी लेवी भी भौतिकी के प्राध्यापक हैं। आप दोनों की दो संताने हैं जो इस समय प्रिंसटन विश्वविद्यालय में अध्ययनरत हैं।

प्रो. चन्द्रलेखा सिंह के जीवन में गांधी-दर्शन का प्रभाव रहा है। बाल्यकाल से ही उनके पिता उन्हें सादा जीवन जीने तथा उच्च विचार रखने की प्रेरणा देते थे। इन विचारों को गाँठ बनाकर प्रो. सिंह अपने जीवन में बाहरी आडंबरों से कभी भी विचलित नहीं हुईं। युवावस्था आने पर वह जान चुकी थीं कि भौतिक विलासिता की वस्तुओं से मन को शांति नहीं मिल सकती। शांति तो केवल मानवता की सेवा करने से ही मिल सकती है। प्रो. सिंह आज भी उन्हीं दर्शनों एवं विचारों पर पूरी तरह से अडिग हैं और उनका पालन कर रही हैं। इस संबंध में यहाँ उनके विचारों का उल्लेख करना समीचीन होगा जैसा कि वह कहती हैं कि उनके पास सब कुछ है, उनका जीवन विलासिता से भरा हो सकता है किन्तु अपनी सीमाओं में रहकर जीवन-जीना उन्हें अच्छा लगता है और वह वैसा ही करती हैं। प्रो. सिंह के स्वभाव एवं विचारों से यह चरितार्थ होता है कि मनुष्य की असल शोभा तो उसका मैत्री स्वभाव, उसके सुविचार, उसका सच्चा ज्ञान और उसकी दानशीलता है। प्रो. सिंह आज की परिस्थितयों में अपने पिताजी के विचारों को प्रासंगिक मानते हुए इंगित करती हैं कि लोगों को अपने मनोरंजन के लिए धन का अपव्यय नहीं करना चाहिए और आमोद-प्रमोद के लिए अपने परिवार के सदस्यों एवं मित्रों के साथ वार्तालाप करना चाहिए, अच्छा संगीत सुनना चाहिए तथा प्रकृति से जुड़े खेलों जैसे हाइकिंग, वाल्किंग, बाइकिंग आदि में भाग लेना चाहिए जिससे उनका तन और मन स्वस्थ बना रहेगा और अपव्यय से भी बचा जा सकेगा। प्रो. सिंह इस बात के लिए दृढ़-संकल्पित हैं कि हमें आने वाली पीढ़ियों के लिए इस पृथ्वी में अनुकूल वातावरण का सृजन करना होगा ताकि वे सहजता से इस पृथ्वी पर रह सकें।

प्रो. चन्द्रलेखा सिंह ने सदैव यह सपना देखा है कि समाज का हर व्यक्ति शिक्षित हो, उसे अच्छी शिक्षा मिले चाहे उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि मजबूत हो अथवा कमजोर। अपने विचारों को मूर्त रूप देने के लिए प्रो. सिंह ने सदैव व्यक्तिगत एवं संगठन के स्तर पर लोगों से संपर्क स्थापित करने का प्रयास किया है और इस दिशा में उन्हें आर्थिक रूप से कमजोर बच्चों के लिए काम करने वाली संस्था "शिक्षा सोपान" तथा "अपॉरच्युनिटी स्कूल" एवं उसके शिल्पकार प्रो. हरीश चन्द्र वर्मा को जानने का अवसर मिला। यहाँ यह बताते चलें कि "शिक्षा सोपान" एक स्वयंसेवी संस्था है जो आईआईटी कानपुर के आस-पास के क्षेत्रों में आर्थिक रूप से कमजोर बच्चों के शैक्षिक उत्थान के लिए काम करती है। इसी प्रकार आईआईटी कानपुर परिसर में "अपॉरच्युनिटी स्कूल" का संचालन हो रहा है जहाँ उन बच्चों को शिक्षा दी जा रही है जिनके माता-पिता परिसर वासियों के यहाँ घरेलू काम करके अपने रोजी-रोटी कमाते हैं। प्रो. सिंह को इंटरनेट के माध्यम से इसकी जानकारी मिली। यह दिव्य संयोग ही कहा जाएगा कि प्रो. वर्मा और प्रो. सिंह भौतिकी के शिक्षण कार्य से जुड़े हुए हैं, दोनों मूल रूप से बिहार के रहने वाले हैं, स्कूलों तथा स्नातक स्तर पर भौतिकी विषय के पठन-पाठन के लिए तत्पर हैं तथा आर्थिक रूप से कमजोर बच्चों की शिक्षा एवं उनके अधिकारों के प्रति सजग हैं। कहते हैं आपकी मान्यताएँ आपके विचार बन जाते हैं, आपके विचार आपके शब्द बन जाते हैं, आपके शब्द आपके कार्य बन जाते हैं आपके कार्य आपकी आदत बन जाते हैं, आपकी आदतें आपके मूल्य बन जाते हैं और आपके मूल्य आपकी नियति बन जाती है। समान मनसा, वाचा और कर्मणा को धारण करने वाली इन दो शख्सियतों के पावन उद्देश्यों को तब और मजबूती मिली जब प्रो. चन्द्रलेखा सिंह ने अपनी दानशीलता का परिचय देते हुए आईआईटी कानपुर परिसर में "अपॉरच्युनिटी स्कूल" के भवन निर्माण के लिए एक मिलियन यूएस डॉलर देने की घोषणा की जो अपने आप में एक मिसाल है और यह कार्य वही व्यक्ति कर सकता है जिसमें दृढ़ इच्छा शक्ति हो। प्रो. सिंह एवं प्रो. हरीश चन्द्र वर्मा के इस सार्थक प्रयास से यह प्रतीत होता है कि "अपॉरच्युनिटी स्कूल" का अपना स्वयं का भवन होगा और वहाँ आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग से आने वाले विद्यार्थियों को कक्षा 1 से 12वीं तक शिक्षा मिल सकेगी और वे भी समाज की मुख्यधारा से जुड़ सकेंगे।

वस्तुतः प्रो. चन्द्रलेखा सिंह भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड्गपुर की पूर्व-छात्रा हैं किन्तु उनके द्वारा भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर से जुड़े सामाजिक मुद्दों के समाधान के लिए मदद करना उनकी उदारता है। समग्र आईआईटी सिस्टम को अपने गुरु के रूप में मानकर दक्षिणा स्वरूप अपने जीवन-भर के आर्थिक उपार्जन का यथेष्ट अंश सामाजिक सरोकार के लिए समर्पित करना उनके जीवन मूल्यों का प्रतिबिम्ब है। संस्थान समुदाय आशा करता है कि प्रो. चन्द्रलेखा सिंह की समर्पण भावना से प्रेरित होकर हमारे पूर्व-छात्र भी अपने कदम आगे बढ़ाएंगे। संस्थान समुदाय की ओर से 'अंतस' परिवार प्रो. चन्द्रलेखा सिंह के प्रति आभार व्यक्त करता है। ...

संकलन
राजभाषा प्रकोष्ठ

भारत बदल रहा है! धीरज रखें!!

आंख खुलते ही उसने अलसाते हुए घड़ी की तरफ देखा तो सुबह के 5:30 हो रहे थे। मन-ही-मन बुदबुदाया "अरे यार! ये क्या? सोचा था कि आज छुट्टी है, देर तक सोऊंगा, पर कमबख्त आंख रोज की तरह अपने समय पर ही खुल गई।" दोबारा बड़ी देर तक सोने के प्रयास में करवटें बदलता रहा लेकिन नींद नहीं आनी थी तो नहीं आई। अन्यमनस्क भाव से मोबाइल उठा लिया और देखा कि व्हॅाट्सएप पर किसी ने एक वीडियो शेयर किया था। गाना उसकी अपनी ही मातृभाषा "अवधी" में था और बहुत ही सुंदर तरीके से फिल्माया गया था। गाने के बोल थे-

सब कुछ बाटे ठीक-ठाक हो, ना कवनो परेशानी।

जोन्हरी कटि गै, धान पकत बा बरसा बा खूब पानी।।

ऊंख के खेत में बड़का कक्का-काकी करें छोलाई।

छोटका बबुआ कोल्हू संगे करत हौवे पेराई॥

ओ! घर आजा परदेसी। खियाईब तुहैं गुड़ देशी...........

गाना सुनते-सुनते वह अपने बचपन की यादों में खोता चला गया। बचपन में ही उसकी दादी ने उसे सिखा दिया था कि बेटा यदि दिन की शुरुआत शुभ हो जाए तो पूरा दिन शुभ रहता है। इसलिए दिन को शुभ बनाने के लिए सुबह उठते ही सबसे पहले अपनी हथेलियों को देखते हुये 'कर-दर्शनम्' करना चाहिए। सुबह जब नींद से जागो तो सबसे पहले अपनी हथेलियों को आपस में मिलाकर किताब की तरह खोल लो और यह मंत्र पढ़ा करो-

कराग्रे वसते लक्ष्मी, करमध्ये सरस्वती।

कर मूले गोविंद: प्रभाते कर दर्शनम्।।

अर्थात मेरे हाथ के आगे वाले भाग में महालक्ष्मी, मध्य भाग में सरस्वती और मूल भाग में भगवान विष्णु का निवास है। मैं इन्हें प्रणाम करते हुये इनके दर्शन करता हूँ।

परंतु बदलते समय के साथ अब वह खुद भी तो कितना बदल गया था। अब तो प्रभाते 'कर दर्शनम्' की जगह 'प्रभाते मोबाइल दर्शनम्' उसकी जीवन-शैली बन गई थी। सुबह-सुबह के मोबाइल-ज्ञान ने आज की तारीख में उसके बचपन के सारे के सारे संस्कार बदल कर रख दिए थे। सौभाग्य से आज का मोबाइल-ज्ञान उसे अच्छा लगा था। वीडियो देखते ही वह अपने अतीत की मिठास में घुलता चला गया था, बिस्तर से उठने की अनिच्छा और बिसूरते हुए चेहरे के साथ वह बुदबुदाने लगा "अभी पिछली ही छुट्टी के दौरान जब वह अपने गांव गया हुआ था तो घर में मिट्टी की पुरानी दीवार

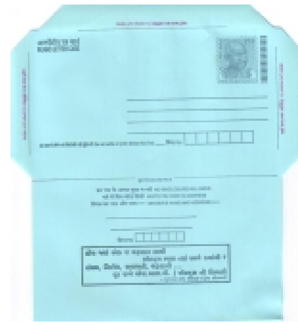

में बनी हुई अपनी लकड़ी की अलमारी को जिसे दीमकों ने अब पूरी तरह से जर्जर कर दिया था, साफ कर रहा था तो पुरानी जुर्राब में बंधे हुए वे कंचे मिले थे जो उसके बचपन के साथी थे और जिन्हें तीसों साल पहले उसने दादा जी की मार के डर से छुपा कर रख दिया था। उसने बड़े ही प्यार से उन कंचों को दुलारा और सहलाया था और फिर गांव के बच्चों को खेलने के लिए दे दिया था। यह अलग बात है कि उन बच्चों ने थोड़ी देर खेल कर उन कंचों को तालाब में फेंक दिया था क्योंकि अब बच्चे कंचे नहीं क्रिकेट खेलते हैं। वीडियो में एक व्यक्ति कोल्हू के चारों तरफ घूम-घूम कर बैलों को हांक रहा था और उसका बच्चा एक-एक कर गन्ने को कोल्हू में पकड़ा रहा था। अरे! उस दिन भी ठीक ऐसा ही तो हुआ था जब वह स्कूल से 11वीं के छमाही-सत्र की परीक्षा को देकर घर आया ही था कि दादा जी ने उसे कोल्हू के पास गन्ने की पेराई के लिए ड्यूटी पर लगा दिया था। उसके बड़े भाई साहब, जो उन दिनों कानपुर में नौकरी करते थे, घर आए हुए थे। उसने उनकी एक पुरानी पैंट पहनकर उसे बेल्ट की जगह पर रस्सी से बांध रखा था। ढीली-ढाली पैंट में वह बिल्कुल चार्ली चैपलिन की तरह लग रहा था। ठीक उसी समय दो मेहमान (एक बूढ़े से और एक जवान) घर पर आए हुये थे जिन्हें गन्ने के ताजे-ताजे रस में दही मिलकर पिलाया गया था। जवान व्यक्ति ने उससे पढ़ाई-लिखाई के बाबत कुछ सवाल भी पूछा था और बाद में पता चला था कि वह अपनी लड़की से शादी के लिए उसे ही देखने आए थे। उसके साँवले और पिद्दी जैसे मुखड़े पर बिखरे-बिखरे बाल, चार्ली चैपलिन वाले ड्रेसिंग-सेन्स और नमकीन-चाय वाली खिदमत की जगह पर गन्ने के रस वाली खातिरदारी शायद उस जवान व्यक्ति को अच्छी नहीं लगी थी, जिसके कारण झुंझलाहट उसके चेहरे से टपक रही थी। लेकिन उस जवान व्यक्ति की अनिच्छा के बावजूद बुढ़ऊ, जो शायद उसके चाचा जी थे, ने पुरानी हवेली जैसा मकान, घर की दक्षिण दिशा में विशालकाय गूलर के पेड़ के नीचे बंधे हुये चार खूबसूरत बैलों और दो भैंसों को देखकर एक खाता-पीता समृद्ध किसान-परिवार समझ कर अपनी पोती की शादी उससे तय कर ही दी थी। जो आज उसकी पत्नी है और संभवतः वह अपने को भाग्यशाली भी समझती है।

सच! समय कितना आगे बढ़ चुका है। आज कहीं भी चले जाइए आपको बैलों से चलने वाला कोल्हू तो मिलेगा ही नहीं, अब तो देहात में भी लोग गुड़ खरीदकर खाते हैं, गन्ने का ताजा रस तो शहरी लोग पीते हैं, देहात में तो अब लोटा भर-भर कर चाय पी जाती है। वह सोचने लगता है......... शायद भारत बदल चुका है या बदल रहा है।

इसी उधेड़बुन में वह कब बिस्तर छोड़ कर उठ जाता है, उसे खबर ही नहीं। छुट्टी का दिन है, सोचकर पत्नी को नहीं जगाता। मुंह-हाथ धोकर किचन में जाकर गैस पर चाय बनाने लगता है। चाय बनाते-बनाते फिर अपने अतीत में सरक जाता है आखिर यही पत्नी जब शादी के बाद पहली बार उसके घर आई थी तो लकड़ी जलाकर मिट्टी के चूल्हे पर पूरे परिवार के लिए चाय बनाती थी और खाना पकाती थी। वह स्कूल से आता था तो कोई सुन न ले इसलिए धीरे से, लेकिन बड़े प्यार से कहती थी, सुनिए! सूखी लकड़ी खत्म हो गई है खाना बनाने के लिए चौला फाड़ दो और वह बड़ा ही खुश होकर कुल्हाड़ी से चौला फाड़ने लगता था। उसकी भाभी मजाक करते हुए कहती थीं "का हो बबुआ! मेहरिया कै बड़ी सेवा करत हवा। चला सेवा करबा तो मेवा खईबा।" वह मन ही मन मुस्कुराने लगता है। सोचता है शायद! उस समय एक संयुक्त परिवार में यह सब काम पत्नी से नजदीकी बढ़ाने का ग्राउंड तैयार किया करते थे। उन दिनों कुछ एक धनाढ्य परिवारों को छोडकर सभी के यहाँ पर मिट्टी के चूल्हे पर लकड़ी से खाना पकाना एक भरी भरकम जद्दोजहद हुआ करती थी। आज का दिन है कि PNG गैस पर चाय बन रही है। कितना बदलाव आ गया है अब तो सरकार ने भी 'उज्जवला' योजना के तहत गरीबी रेखा से नीचे के करोड़ों परिवार को मुफ्त में PNG गैस कनेक्शन बांट चुकी है। अब गावों में भी घरों से धुयें का गुबार नहीं उठता बल्कि बनते हुए भोजन की खुशबू आती है।

अखबार पढ़ने के साथ वह चाय सुड़क ही रहा था कि मोबाइल पर नए मैसेज ने दस्तक दिया। उसने देखा कि उसके दादा जी ने कुछ ही देर पहले आम खाते हुए अपनी सेल्फी अपलोड की थी। उसने अपने दादाजी को उनकी खूबसूरत तस्वीर और अच्छे स्वास्थ्य की बधाई दी और फिर फ्लैशबैक में चला गया। उस समय वह शायद आठवीं में पढ़ रहा था जब गांव के जवाहिर चाचा एक दिन उसके घर एक बैरंग चिट्ठी हाथ में लेकर घबराते हुए आए थे। ''गौरतलब है 70 और 80 के दशक में जब कोई चिट्ठी अपने गंतव्य पर पहुंचती नहीं थी या पानेवाला उसका जवाब नहीं देता था तब बैरंग चिट्ठी भेजने का प्रचलन इसलिए था कि वह जरूर अपने गंतव्य तक पहुंचेगी और जब बैरंग चिट्ठी छुड़ाने वाले को दोनों तरफ का पोस्टल चार्ज देना पड़ेगा तो वह झख मारकर चिट्ठी का जबाब भी देगा।'' जवाहिर चाचा पढ़े-लिखे तो थे नहीं, ऊपर से बैरंग लिफाफे को छुड़ाने के लिए पोस्टमैन को अठन्नी भी देनी पड़ी थी इसलिए क्रोध में भी थे। बहरहाल, दादा जी के कहने पर लिफाफा उसी ने खोला था। जवाहिर चाचा की छोटी बहन सुगना, जो कुछ दिन पहले ही अपने पति के साथ चंडीगढ़ में रहने लग गई थी, ने अपने जवाहिर भैया को अपनी कुशल-क्षेम भेजा था और साथ ही आने वाले रक्षाबंधन के लिए राखी भेजी थी। सुगना ने भावातिरेक में अपनी चिट्ठी में फिल्म छोटी बहन (1959) का बहुत प्रचलित गाना-

भैया! मेरे राखी के बंधन को निभाना।

भैया! मेरे छोटी बहन को न भुलाना।।

देखो! ये नाता निभाना-निभाना।

भैया! मेरे राखी के बंधन को निभाना भी लिखा दिया था।

वह चिट्ठी पढ़ ही रहा था कि अचानक जवाहिर चाचा जोर-जोर से रोने लगे थे। उसने समझा कि लगता है जवाहिर चाचा को अपनी बहन सुगना की बहुत याद आने लगी है। लेकिन नहीं! यह तो मामला ही उल्टा था। जवाहिर चाचा अपने संस्कार और परिवार के इज्जत की दुहाई देते हुए रो-रो कर कह रहे थे "अरे दादा! सुगनवा तो नचनिया हुइ गई है। अरे अब तौ चिट्ठियौ मा गाना लिखति बाय। हाय राम! अब का हुइ हैं। ईतौ पूरे परिवार कै नकिया बिरादरी में कटिवाय दिहेस रे दादा।"

वह ठहाके मार कर हंस रहा था। उसकी पत्नी, जो अब तक बिस्तर से उठ चुकी थी, ने बड़े ही विस्मय से उसकी तरफ देखते हुए पूछा! क्या हुआ? तबीयत तो ठीक है न? उसने जब अपनी पत्नी को पूरा वाकया बताया तो वह भी हंसने लगी। दोनों विमर्श करने लगे। कैसे उनके बचपन में एक दूसरे की कुशल-क्षेम जानने के लिए हफ्तों और महीनों तक इंतजार करना पड़ता था और आज कैसे पूरी दुनिया मुट्ठी में समा गई है। अब तो व्यक्ति दुनिया के किसी भी कोने में बैठकर दूसरे छोर की खबर पल भर में जान लेता है। सूचना-क्रान्ति के दौर में मोबाइल ने तो पूरी दुनिया को एक मुहल्ले में तब्दील कर कर दिया है। दैनिक जीवन में सूचनाओं का आदान-प्रदान, गणितीय परिगणना, खरीद-फरोख्त, बैंकिंग सेवाएं और मनोरंजन जैसे तमाम कामों को लोग आज बड़ी सहजता से मोबाइल के माध्यम से सम्पन्न कर रहे हैं। ज्यादा नहीं बस 20 बरस पहले तक मुहल्ले या किसी गांव में जब किसी एक के पास लैंडलाइन वाला टेलीफोन हुआ करता था तो उसकी गिनती समाज में एक जागरूक और संपन्न व्यक्ति के रूप में होती थी। उसके यहां दरबार लगा रहता था। उसके बाद PCO का जमाना आया जहां बात करने से ज्यादा टेंशन उसके बिल को देखकर हो जाती थी। कभी

असंभव सी लगने वाली तमाम भ्रांतियों को आज मोबाइल ने उधेड़ कर रख दिया है। आज चाहे वह गांव हो या शहर, बिन पानी सब सून की जगह बिन मोबाइल जीवन सून हो गया है। अद्यतन सर्वे यह बताता है कि 2017 के अंत तक केवल भारत में ही लगभग 730 मिलियन लोग मोबाइल की सेवाएँ लेने लगेंगे जिसमें 340 मिलियन लोग तो अपने दैनिक जीवन की अधिकांश गतिविधियों को स्मार्टफोन के माध्यम से संचालित करेंगे। वस्तुतः भारत में बदलाव बड़ी द्रुतगति से हो रहा है।

यह भी उतना ही सच है कि ई-मेल, फेसबुक, इंस्टाग्राम और ट्विटर जैसे संपर्क-माध्यम से सोशल मीडिया जितनी तेजी से एक दूसरे को जोड़ रहा है, उतनी ही तेजी से परिवार, ग्रुप, स्कूल और कार्यालयों में साथ रहने और कार्य करनेवालों के संप्रेषण कौशल को कमजोर भी कर रही है। sms की भाषा ने तो भाषायी मौलिकता का तहस-नहस ही कर दिया है। आज यदि किसी परिवार के सभी सदस्य आपस में वार्ता करते हुए या खाने की मेज पर एक साथ खाना खाते हुए दिख जाएं तो यह एक दुर्लभ घटना होगी क्योंकि अब लोग एक साथ एक ही घर में रहते हुए भी दूर होते जा रहे हैं। घर हो या ऑफिस अथवा कोई पब्लिक प्लेस, हर कोई अपने-अपने मोबाइल में खोया रहता है। उसे अपना बचपन याद आता है। दादाजी का स्पष्ट निर्देश था कि परिवार के सभी बड़े-छोटे कम से कम शाम का खाना एक साथ बैठकर खाएंगे जो अब उसके ही घर में कई वर्षों से बंद हो चुका है। उसे आज भी पौआ, अद्धा, ड्यौढ़ा, सवैया और 40 तक का पहाड़ा याद है, जिसे उसके दादाजी और स्कूल के मास्टर जी ने रट्टा मरवा-मरवा कर याद करवा दिया था, लेकिन आज के बच्चों से पूछो तो वह तुरत-फुरत मोबाइल या कैलकुलेटर का सहारा लेकर बताते हैं। सबसे दुखद पहलू तो यह है कि जिस उम्र में बच्चों को अध्ययनरत होना चाहिए उस उम्र में आज बहुत से बच्चे आत्म-रति का शिकार हो रहे हैं। वस्तुतः बदलाव यद्यपि शुभ संकेत है, प्रगति का सूचक है और आज इंटरनेट के माध्यम से ज्ञान-विज्ञान का अथाह समुद्र भी हमारी चौखट पर हिलोरें मार रहा है तथापि! दरकार है समाज के हर व्यक्ति से कि वे ज्ञान के महासागर में अवगाहन कर ज्ञान-वृद्धि तो करें परंतु आनुषंगिक खतरों से स्वयं के साथ भावी पीढ़ी को भी बचायें।

अखबार पढ़ते-पढ़ते ही अचानक उसकी दृष्टि अखबार के साथ आनेवाली उस साप्ताहिक पत्रिका पर पड़ी जिसमें "रिश्तों की नई परिभाषा" नाम से एक लेख छपा था। उस लेख के दो चित्रों ने बरबस उसका ध्यान आकृष्ट किया। एक चित्र में अमेरिकी राष्ट्रपति श्री डोनाल्ड ट्रंप और दूसरे चित्र में इस्राइल के प्रधानमंत्री श्री नेतन्याहू सारे प्रोटोकॉल को भूलकर भारतीय प्रधानमंत्री का स्वागत गले मिलकर कर रहे थे। उसका दिल गद्गद था क्योंकि पिछले कुछ सालों से राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह महसूस किया जाने लगा था कि चाहे विश्वव्यापी आतंकवाद की समस्या हो, बेरोजगारी हो, भ्रष्टाचार अथवा पर्यावरण की समस्या हो भारत बड़ी सक्रियता से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सकारात्मक भूमिका का निर्वहन कर रहा है। वैश्वीकरण के दौर में जहां दुनिया बड़ी तेजी से क्षण-प्रति-क्षण करवट बदल रही है वहीं भारत अपनी पहचान को न केवल नई दिशा प्रदान कर रहा है बल्कि अपने हित के लिए तमाम मुल्कों के साथ राजनीतिक, कूटनीतिक एवं व्यापारिक संबंध भी स्थापित कर रहा है। आज भारतीय अर्थव्यवस्था, विदेशी निवेश के मामलों में, शीर्ष 10 देशों में गिनी जाने लगी है। विश्व की बड़ी-बड़ी नामचीन कंपनियां न केवल भारत में निवेश करने को तैयार हो रही हैं बल्कि मेक इन इंडिया के तहत नए-नए उद्योगों को स्थापित करने की योजना भी बना रही हैं जिससे भारत में पर्याप्त रोजगार की संभावना बढ़ गई है। निसंदेह यह बदलते भारत का सूचकांक है।

इतिहास में इस बात के पुख्ता प्रमाण मिलते हैं कि भारत में वैज्ञानिक अनुसंधानों और आविष्कारों की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। जिस समय यूरोप में घुमक्कड़ जनजातियां अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रही थीं उस समय सोने की चिड़िया वृहद भारत में सिंधु घाटी के लोग सुनियोजित नगर बसा कर रहते थे। मोहनजोदड़ो, हड़प्पा आदि स्थानों पर हुई खुदाई में मिले नगरों के खंडहर इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इन नगरों के भवन, सड़कें, नालियां, स्नानागार और कोठार आदि पक्की ईंटों से बने हुये थे। भारत में विज्ञान की यह परंपरा लगभग 11वीं सदी तक काफी उन्नत अवस्था में थी। हमारे इतिहास में आर्यभट्ट, वाराह मिहिर, चरक, सुश्रुत, नागार्जुन, कणाद और सवाई जयसिंह जैसे गणितज्ञों, आयुर्वेदाचार्यों और वैज्ञानिकों की एक लंबी फेहरिस्त है। दुर्भाग्य से भारत की इस समृद्ध परंपरा को विदेशी आक्रांताओं ने ऐसा छिन्न-भिन्न किया कि हमें विश्व की मुख्यधारा में पुनः अपना स्थान बनाने में सैकड़ों वर्षो का सफर तय करना पड़ा। बैलगाड़ी की यात्रा से इसरो द्वारा उपग्रहों के प्रक्षेपण तक का सफर यद्यपि कंटकाकीर्ण था तथापि! आज अंतरिक्ष के क्षेत्र में भारत दुनिया के सबसे शक्तिशाली 5 देशों में शामिल हो चुका है। हर्ष का विषय है कि जिस देश ने विक्रम साराभाई के निर्देशन में 19 अप्रैल 1975 को स्वदेश निर्मित पहले उपग्रह आर्यभट्ट का सफल प्रक्षेपण किया था, उसी देश ने इसी साल एक साथ सर्वाधिक 104 उपग्रह अंतरिक्ष में प्रक्षेपित कर नया कीर्तिमान स्थापित किया। प्रसन्नता की बात है कि अब इसरो एक व्यापारिक संस्था का रूप ले चुका है और कई

देशो के उपग्रह अंतरिक्ष में भेजकर करोड़ों की विदेशी मुद्रा अर्जित कर रहा है। भारत अंतरिक्ष तकनीक में वस्तुतः कामयाबी की नई इबारत लिखने की दिशा में तेजी से बढ़ चुका है। हाल ही में इसरो के वर्तमान अध्यक्ष ने पत्रकारों से वार्ता के दौरान बताया कि भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन सन 2018 की पहली तिमाही में बड़े मानवरहित अभियान के तहत चंद्रमा पर दूसरा मिशन चंद्रयान-2 भेजने वाला है। उनके अनुसार चंद्रमा पर अंतरिक्ष यान को उतारने का परीक्षण प्रगति पर है।

वह अन्तरिक्ष-यान की काल्पनिक यात्रा कर ही रहा था कि एक आवाज से उसकी तंद्रा भंग हो गई।

अरे! नहा-धोकर तैयार हो जाइए.... नाश्ता तैयार है..... उसकी पत्नी ने आवाज दी।

नहीं! अभी सुबह-सुबह इतनी बढ़िया बरसात हुई है....... सुहाने मौसम का आनंद लेने दो..... बाद में नहा लेंगे........ आओ आज पहले नाश्ता कर लेते हैं....... उसने कहा।

रिमोट उठाकर टेलीविजन चालू कर देता है समाचार प्रस्तोता की आवाज उसके कानों पर पड़ती है “बनारस जिले का एक थाना विवाह-मंडप में उस समय तब्दील हो गया जब थानेदार ने खुद रिवॉल्वर रानी के नाम से विख्यात लड़की का कन्यादान कर उसके प्रेमी से उसकी शादी करवाई। शादी में वर-पक्ष का कोई भी शामिल नहीं हुआ लेकिन वधू-पक्ष से केवल उसकी विधवा माँ शामिल हुई और अपनी बेटी और दामाद को आशीर्वाद दिया। थाने की पुलिस ने बतौर पुलिस-मित्र बनकर उदाहरण पेश करते हुये बाराती और जनाती दोनों का रोल अदा करते हुये नव-विवाहित जोड़े को घर बसाने के लिए जरूरत का सामान भी भेंट किया।” खबर निःसन्देह दिलचस्प थी। वह 15 दिन पहले वाला अखबार उठा लाया जब पहली बार यह खबर वायरल हुई थी। खबर कुछ यूं थी कि लड़का और लड़की दोनों एक ही कार्यालय में काम करते थे। दोनों में प्यार हुआ, दोनों ने एक दूसरे से शादी कर साथ रहने की कसमें खायी। परंतु, लड़के के पिता को जब पता चला तो उसने दहेज के लालच में लड़के की शादी दूसरी जगह तय कर दी। बाप के सामने लड़के की एक न चली और बिना अपनी प्रेमिका को बताए दूसरी जगह शादी करने को तैयार हो गया। प्रेमिका को जब पता चला तो दुखी होकर रोने और घबराने की बजाय वह कुछ दोस्तों को लेकर सीधे बारात में पहुँच कर बरातियों-जनातियों के सामने से, यह कहते हुये कि प्यार मुझसे और शादी किसी और से, ये हो नहीं सकता, रिवाल्वर की नोक पर शादी के मंडप से दूल्हे को अगवा कर लिया और सीधे थाने पहुँच गई। दोनों बालिग थे, पुलिस के तहकीकात करने पर लड़के ने भी कुबूल कर लिया कि वही लड़की उसका पहला प्रेम है और वह उसी के साथ शादी करना चाहता था लेकिन पिता के डर से दूसरी जगह पर शादी करने को राजी हो गया। पुलिस के लाख समझने पर भी जब लड़के का पिता नहीं माना तो यह जिम्मेदारी खुद पुलिस ने उठायी और दोनों की विधि-विधान से शादी करवा दी।

उसे पता नहीं क्यों इस रिवाल्वर वाली लड़की पर फक्र महसूस हो रहा था। पत्नी की तरफ देखते हुये बोला “जब तक लड़कियां अपने भविष्य के लिए इसी तरह हिम्मत से निर्णय नहीं लेंगी तब तक पुरुष-प्रधान समाज में बदलाव नामुमकिन है।” पता नहीं उसकी पत्नी उसके इस तर्क से कितना सहमत थी यह तो उसकी प्रतिक्रिया से नहीं पता चल पाया। बहरहाल! उसे बदलते परिवेश में महिलाओं की बदलती सोच और निर्णय लेकर कर गुजरने की संकल्प-शक्ति स्वागत-योग्य लगी। अवकाश का दिन होने के नाते तन-मन पर छाये आलसपन और रिम-झिम बरसात की ठंडी हवाओं तथा उन सबसे ऊपर इस दिलचस्प खबर ने अब उसे शरारती बना दिया था। उसने ठिठोली की और अपनी पत्नी को याद दिलाते हुये बोला “बड़की बुआ तो बताया करती थीं कि जब मैं छुट्टी बिताकर नौकरी पर चला जाता था तो तुम भी वियोगी बनकर बड़े सुर में कोई गाना गुनगुनाया करती थीं।” पत्नी भी भूली-बिसरी यादों में खोते हुये हौले से मुस्करायी। मौनं स्वीकृतिः। उसने अपनी पत्नी की आँखों में झांक कर गुदगुदी करते हुये गुजारिश की, यार! मौसम भी है, समय भी है और दस्तूर भी! आज वही गाना एक बार फिर मेरे लिए गुनगुना दो......

शायद उसे भी अपने पति का यह अंदाज भा गया था। खिड़की से ठंडी हवाओं के साथ आती हुई बरसाती फुहार से उसका तन-मन सिहर रहा था। बाहर उमड़ते-घुमड़ते बादलों की अठिखेलियाँ उसे रोमांचित कर रही थीं। उसने कनखियों से पति को निहारा........ बीते हुये मधुर लम्हों के कुहासों में तैरते हुये हिचकोलें खाने लगी...... कंठ से स्वर बरबस ही फूट पड़े-

रेलिया बैरन पिया को लिए जाय रे!

रेलिया बैरन पिया को लिए जाय रे!!

रेलिया बैरन..............

जौने टिकसवा से पिया मोरा जईहैं! पिया मोरा जईहैं, हो पिया मोरा जईहैं!!

पनिया बरसै टिकस गलि जाय रे!

रेलिया बैरन पिया को लिए जाय रे!

रेलिया बैरन..............

जौने शहरिया में पिया कै नोकरिया! पिया कै नोकरिया, हो पिया कै नोकरिया!!

अगिया लागै शहर बरि जाय रे!

रेलिया बैरन पिया को लिए जाय रे!

रेलिया बैरन..............

कुछ ही पलों में ”मन की बात“ का प्रसारण होने वाला है, कृपया प्रतीक्षा करें.........टेलीविजन से आवाज आयी। प्रधानमंत्री जी की मन की बात पूरी होने के साथ ही दोनों आश्वस्त हो चुके थे कि सचमुच, भारत अब प्रगति के मार्ग पर लंबी छलांग लगाने के लिए कटिबद्ध है। सदियों से सामाजिक और धार्मिक उत्पीड़न की बेड़ियों में जकड़ी, छटपटाती देश की आधी आबादी खुद की ख्वाबे-ताबीर गढ़ने को तैयार है। दकियानूसी विचारधारायें विखंडित हो रही हैं। अवगुंठन की ओट से निकल कर महिलाएं अब शौचालय, स्वच्छता और मद्य-निषेध पर खुलकर अपना पक्ष रख रही हैं। नई अर्थव्यवस्था का आगाज हो चुका है। पुरानी राजनीतिक व्यवस्था अपने अस्ताचल पर पहुँच गई है। नई व्यवस्था की नाव चतुर्दिक बदलाव के लक्ष्य के साथ अपनी यात्रा आरंभ कर चुकी है। बदलाव की यह यात्रा अपने गंतव्य पर पहुंचेगी या कि दल-दल में फँसकर सांस तोड़ देगी ये तो फिलहाल भविष्य के गर्भ में छिपा है परंतु आज का सबसे बड़ा सत्य यही है-

भारत बदल रहा है! धीरज रखें!!

डॉ. वेदप्रकाश सिंह
उपकुलसचिव एवं संपर्क अधिकारी(हिन्दी)
भा.प्रौ.सं.कानपुर

परिसरवासियों के नाम

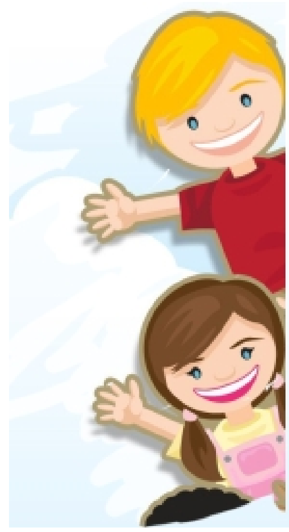

बच्चे आजकल अधिकतर समय कंप्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल, वीडियो गेम्स आदि में व्यर्थ गंवाते हैं। उनके ध्यान को पुस्तकों की ओर मोड़ने के लिए आई आई टी कानपुर के विमेंस एसोसिएशन ने “चिल्ड्रेन्स बुक क्लब” आरम्भ किया है। इस बुक क्लब का उद्घाटन इसी वर्ष अप्रैल की 2 तारीख को हुआ। पुस्तकालय, 31वीं स्ट्रीट स्थित ‘फैकल्टी क्लब’ में अवस्थित है जो सप्ताह में दो दिन, बुधवार और रविवार को शाम 5 बजे से 6 बजे सदस्यों के लिए खुला होता है। पुस्तकों में छिपी दुनिया में अपने आप को ढूंढे और आनंद उठाये। परिसर के सभी बच्चों का स्वागत है।

यह पुस्तकालय पूर्णतः वालंटियर्स द्वारा संचालित है। कई महिलाओं और बच्चों ने बहुत सी पुस्तकें इस पुस्तकालय में दान दी हैं। इन दिनों बच्चे नई-पुरानी, सभी किताबों का भरपूर आनंद ले रहे हैं। इस समय पुस्तकालय की सदस्य संख्या लगभग 49 है।

पठन-पाठन के अतिरिक्त चिल्ड्रेन्स बुक क्लब में बालोपयोगी तथा किशोरोपयोगी कार्यकलाप समय-समय पर आयोजित किये जायेंगे। उदाहरणार्थ स्टोरीटेलिंग, स्टोरीबिल्डिंग, स्टोरीएक्टिंग, वर्ड गेम्स, क्विज इत्यादि।

कोई भी पुस्तक प्रेमी चिल्ड्रेन्स बुक क्लब में आकर पुस्तकों का आनंद उठा सकता है।
किसी भी प्रकार की जानकारी के लिए मेल करने का पता:
cbookclub.iitk/gmail.com

डॉ. अंजना पोद्दार

भारतीय साहित्यः एक महासागर

यदि भारतीय साहित्य को परिभाषित करने पर प्रश्न किया जाए तो अमूमन प्रत्यक्ष उत्तर यही होगा कि भारतीय साहित्य वही है जो भारत में लिखा गया है। तथापि, अनेक बुद्धिजीवी लेखक, विचारक और समालोचक भारतीय साहित्य को एक श्रेणी में रखे जाने की अवधारणा से सहमत नहीं हैं। उनका मानना है कि भारत की विभिन्न भाषा तथा संस्कृतियों में कुछ भी एक समान नहीं है; तो क्या हमें मान लेना चाहिए कि भारतीय साहित्य यहां के रचनाकारों की उन पृथक-पृथक अभिव्यक्तियों का संग्रह मात्र है जो क्षेत्र विशेष से उनके संबंधित होने के बाद भी एक ताने-बाने के अधीन संकलित की गई हैं? अथवा वह एकत्व बोध है जो भिन्न-भिन्न स्वरों में व्यक्त भावनाओं में विद्यमान एक समान विरासत को इंगित करता है? हमारी पच्चीकारी सदृश विरासत, जो अलग-अलग आधार स्तंभों पर टिकी है, के विश्लेषण से कदाचित् हमें इस प्रश्न का उत्तर खोजने में कुछ सहायता मिल सकती है।

आम धारणा है कि प्राचीन भारतीय साहित्य ही क्लासिकल संस्कृत साहित्य है जिसके सबसे प्रख्यात रचनाकार कालिदास हुए हैं। किन्तु देखा जाए तो प्राकृत साहित्य भी उतना ही, या यूं कहें कि शायद संस्कृत से भी पुराना साहित्य है। यद्यपि यह आज भी तर्क का विषय है कि प्राकृत को एक भिन्न भाषा माना जाए या संस्कृत का अनगढ़ रूप माना जाये। लेकिन इस बात पर सभी विद्वत्जन सहमत हैं कि प्राकृत जनसाधारण की भाषा थी जबकि संस्कृत देवभाषा थी जो अभिजात्य वर्ग के धार्मिक एवं उच्च सांस्कृतिक आयोजनों तक सीमित थी। यह माना जा सकता है कि दोनों ही भाषाएं सर्वस्वीकार्य थीं क्योंकि हमें ये दोनों एक ही साहित्य में विद्यमान दिखाई पड़ती हैं। उदाहरणार्थ कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुंतलम' में दुष्यंत संस्कृत भाषा में संवाद करते हैं तो शकुंतला और उसकी सखियाँ पालि भाषा में, राज रक्षक मागधी भाषा बोलते हैं तथा मछुआरे शौरसेनी में संवाद करते हैं। वस्तुतः हर किसी द्वारा बोली जाने वाली भाषा उसके वर्ग एवं सामाजिक स्तर का सूचक होती थी और कालिदास ने भी उसी के अनुसार हर पात्र के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया था। प्राकृत भाषा के भी कई रूप प्रचलित थे जिनमें पालि, अपभ्रंश तथा महाराष्ट्री प्राकृत प्रमुख भाषाएं थीं। बौद्धों और जैनियों की अधिकांश प्रारंभिक रचनाएं 'जातक कथाएं' एवं 'पौमाचारियम' पालि भाषा में लिखी गई थीं। प्राकृत की प्रसिद्ध रचनाओं में से एक रचना सातवाहन राजा 'हाला' का काव्य-संग्रह 'गाथा सतसई' है जो संस्कृत में 'गाथा-सप्तशती' कहलाती है। ये छोटी-छोटी सुंदर कविताएं हैं जो कहीं-कहीं अत्यंत गूढ़ किंतु लोगों के दैनिक जीवन-शैली से रची-बसी हैं।

तमिल में रचित 'संगम साहित्य' भारत की दूसरी क्लासिकल साहित्य-परंपरा है। संगम का वास्तविक अर्थ लोगों के उस समूह से है जो उन

कवियों के बारे में इंगित करता है जिनके बारे में माना जाता है कि वे ईसवी सन् के भी बहुत पहले की कवि बिरादरी से संबंध रखते थे। श्रुति के अनुसार उस युग में तीन अलग-अलग संगम हुआ करते थे जिनमें से हम तक अंतिम संगम द्वारा रचित साहित्य ही पहुंच पाया। संगम साहित्य का आशय इसीलिए इस तीसरे संगम द्वारा रचित साहित्य से लिया जाता है। संगम साहित्य की विशेषता है कि उसने पेड़-पौधों एवं जीव-जंतुओं का प्रतीक के रूप में उपयोग किया गया है जिसमें हर फूल,पर्वत या समुद्र तट किसी भाव विशेष को अभिव्यक्ति देता जान पड़ता है, मसलन पहाड़ी तलहटी का जंगली पुष्प प्यार में यौवन और आशा का प्रतीक है तो मरुस्थल बंजर-क्षेत्र प्रिय से बिछड़ने का प्रतीक है। इन कविताओं में भावनाओं के कोष को जिस तरह काल्पनिक प्रतीकों के माध्यम से उकेरा गया है उसे पढ़कर हम आज भी भाव-विभोर हो उठते हैं जैसे कि सीप जो सागर को प्रतिध्वनित करती है। हर छोटी-छोटी कविता जो दस-पंद्रह पंक्तियों से अधिक की नहीं है फिर भी अंततः भावनाओं के पूरे समुद्र को अभिव्यंजित करती है।

संगम-युग के उत्तरवर्ती काल, जो लगभग दूसरी सदी के समय का है, में हमें तमिल के दो विख्यात महाकाव्य 'सिलप्पादिकरम' और 'मनिमेक्लाई' प्राप्त हुये। इलांगों आदिकल,जो स्वयं एक जैन तपस्वी थे, ने 'सिलप्पादिकरम' महाकाव्य की रचना की। यह महाकाव्य यद्यपि कण्णकी नाम की एक स्त्री पर केंद्रित है जो मदुरई के शक्तिशाली पंड्या राजा से अपने पति की अन्याय पूर्ण फांसी का बदला लेने का प्रयास करती है। यह महाकाव्य बहुत कुछ जैन जीवन-दर्शन के बारे में बताता है। उल्लेखनीय बात यह है कि 'सिलप्पादिकरम' और 'मनिमेक्लाई' दोनों स्त्री-केंद्रित महाकाव्य हैं जो रामायण और महाभारत जैसे लोकप्रिय महाकाव्यों से इतर युद्ध एवं विजय जैसे विषयों पर केंद्रित नहीं हैं।

ऐसा प्रतीत होता है की क्लासिकल तमिल और क्लासिकल संस्कृत साथ-साथ विद्यमान रही होंगी। यद्यपि दोनों के सह-अस्तित्व के बारे में हमारे पास यथेष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं है। पहली सहस्त्राब्दि की आरंभिक कुछ सदियों में संस्कृत-साहित्य और साहित्यिक विचार अभूतपूर्व रूप से

पल्लवित हुए थे और इनमें से अधिकांश की रचना कश्मीर में हुई थी। पतंजलि, भामह, आनंदवर्धन, अभिनवगुप्त तथा कल्हण जैसे साहित्यिक विचारक एवं दार्शनिक कश्मीर से थे। 10वीं शताब्दी के लेखक एवं कवि क्षेमेंद्र द्वारा तत्कालीन भ्रष्ट राजशाही पर लिखे गए तीखे व्यंग्य आज भी प्रासंगिक हैं। संस्कृत-साहित्य तथा दर्शन कश्मीर में मध्ययुग तक बराबर फलता-फूलता रहा।

मध्ययुग में ही फारसी-साहित्य और गजल, मसनवी एवं कसीदा जैसी शैलियों की भी पैठ शुरू हो गई थी। अमीर खुसरो इस काल की उल्लेखनीय विभूतियों में से एक थे जो सूफी कवि और निजामुद्दीन औलिया के शिष्य थे। तुर्की पिता तथा हिंदुस्तानी माता के पुत्र खुसरो भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के संवाहक थे। वह फारसी-साहित्य से प्रभावित थे किंतु स्वयं को दिल्ली का कवि मानते थे। वह स्थानीय हिंदवी भाषा बोलते थे और उसी भाषा में उन्होंने कविताएं भी लिखीं। भारत में फारसी गजल तथा कव्वाली विधा उन्हीं की देन है। ऐसा माना जाता है सितार एवं तबले का अविष्कार भी उन्होंने ही किया था। उनके द्वारा बोली जाने वाली हिंदवी दिल्ली के आसपास बोली जाने वाली खड़ी बोली अथवा हिंदी का आरंभिक रूप थी। बाद में इसी हिंदवी और फारसी ने मिलकर उर्दू जैसी सुंदर भाषा को जन्म दिया।

संस्कृतियों का यह रोचक सम्मिश्रण मुगल-काल में भी देखने को मिलता है जब शाहजहां के पुत्र राजकुमार दारा शिकोह ने संस्कृत भाषा की अनेक रचनाओं का फारसी में अनुवाद किया। राजकुमारी जहाँआरा, जो स्वयं भी लेखिका थीं, ने भी इन अनुवाद कार्यों तथा अन्य प्रकार के लेखन को भरपूर प्रोत्साहन दिया। भारतीय साहित्य को नि:संदेह बड़ी क्षति पहुंचती यदि इस परंपरा ने मिर्जा गालिब, मीर तकी मीर और फैज अहमद फैज जैसे असाधारण रचनाकारों को हमें न दिया होता।

मध्ययुगीन काल संस्कृत-भाषा के अवसान तथा अन्य भारतीय भाषाओं के उत्थान तथा उनकी प्रगति का भी गवाह बना जिसके मुख्य कारणों में एक कारण 6वीं शताब्दी में तमिलनाडु से आरंभ होकर संपूर्ण भारत में प्रसरित होने वाला भक्ति-आंदोलन था। मूलतया धार्मिक प्रकृति का यह आंदोलन धार्मिक होने के साथ-साथ धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में व्याप्त ब्राह्मणत्व के एकाधिपत्य के विरुद्ध किया जाने वाला एक जन-आंदोलन भी था। ईश्वर को जनसामान्य के निकट लाने के प्रयास में भक्त कवियों जैसे कबीर, तुकाराम या अक्का महादेवी ने संस्कृत से किनारा करके लोकभाषा को प्रश्रय दिया। भारत की क्षेत्रीय भाषाओं तथा उनके साहित्य की जड़े इस आंदोलन से जुड़ी थीं जिन्होंने जाति, वर्ग और लिंग-भेद की व्यवस्था का तिरस्कार किया।

यहाँ तक कि अंग्रेजों की औपनिवेशिक सत्ता ने भी भारतीय साहित्य को समृद्ध करने में अपना विशेष योगदान देते हुए उपन्यास विधा को शामिल किया। हालांकि कुछ लोगों का मानना है कि भारत में उपन्यास का अस्तित्व ब्रिटिश-शासन से बहुत पहले से रहा है (उदाहरणार्थ बाणभट्ट रचित कादंबरी इसी विधा की रचना है।) किंतु इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि उपन्यास का जो वर्तमान स्वरूप हम देखते हैं, वह अंग्रेजों की ही देन है। यह भारतीय भाषाओं से अंग्रेजी भाषा के तालमेल का ही परिणाम है कि भारत की अपनी हिंदुस्तानी अंग्रेजी है जिसमें भारत की स्थानीय भाषाओं के शब्दों का प्रचुरता से उपयोग होता है। अंग्रेजी भाषा के भारतीय लेखक जैसे सलमान रश्दी, अरुंधति रॉय या अमिताभ घोष आदि ने अपने लेखन में इसी नई हिंदुस्तानी अंग्रेजी भाषा का उपयोग किया और विश्व पटल पर प्रसिद्ध एवं कीर्ति पायी।

यह भारत के लेखकों की आम विरासत है भले ही वह किसी भी क्षेत्र से आए हों। यह उनका कथा-सरित्-सागर है जिसमें वह गोता लगाते हैं। यह एक ऐसा महासागर है जिसमें दुनिया के विभिन्न हिस्सों की कई भाषायी परंपराएं प्रवाहित होकर समा गई हैं।

प्रो. मिनी चन्द्रन
मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग
भा.प्रौ.सं.कानपुर

अनुवाद-राजभाषा प्रकोष्ठ

योग

योग व्यायाम की ऐसी प्रभावशाली विधा है, जिसके माध्यम से न केवल शरीर के अंगों बल्कि मन, मस्तिष्क और आत्मा में संतुलन बनाया जाता है। यही कारण है कि योग से शारीरिक व्याधियों के अलावा मानसिक समस्याओं से भी निजात पाई जा सकती है

योगासन से लाभ

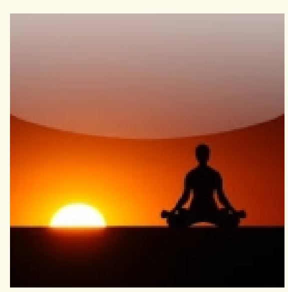

- संपूर्ण स्वास्थ्य
- वजन में कमी
- चिंता से राहत
- अंतस की शांति
- प्रतिरोधक क्षमता में सुधार
- अधिक सजगता संग जीना
- संबंधों में सुधार
- ऊर्जा में वृद्धि
- बेहतर शारीरिक लचीलापन एवं बैठने का तरीका

कविताएं

भारत बदल आया हूँ मैं

भारत बदल आया हूँ, मैं!
नहीं था मंजूर जो जमीर को आज वो ही कर आया हूँ मैं!
बदलना चाहता था भारत और आज खुद को ही बदल आया हूँ मैं!
नहीं फैलते थे जो हाथ कभी मांगने को,
आज उन हाथों में कुछ सिक्के थमा आया हूँ, मैं!
सदियों से जो तोड़ती थी पत्थर निराला का,
आज उसकी छेनी हथौड़ी छीन लाया हूँ, मैं!
सब बहुत खुश थे सिर्फ उसे छोड़कर,
कि उसका आबो दाना उजाड़ आया हूँ, मैं!
पहचानते थे जो मुझे वो भी न जान पाए कि,
बहते हुए दरिया को काजल से बांध आया हूँ, मैं!
कैसे नजरे मिलाऊं अब बहादुर शास्त्री जी से,
कि उनके किसानों को आज मरता छोड़ आया हूँ, मैं!
भले ही कुछ कागज के पत्ते दे दिए होंगे,
पर उनके बच्चों को रोता बिलखता छोड़ आया हूँ, मैं!
मंदिर के अन्दर पत्थर को तो सम्भाल के रखा था हमने,
पर मंदिर के बाहर फकीरों को भीगता छोड़ आया हूँ, मैं!
एक आशियाना तो न बना सका उनकी खातिर,
आज फुटपाथ पर ही उन्हें रौंद आया हूँ, मैं!
सरकारे ऐलान कर रही हैं कि,
भारत बदल आया हूँ, मैं!
पर इसी कश्मकश में हूँ अभी तक,
ये कैसा भारत बदल आया हूँ, मैं!

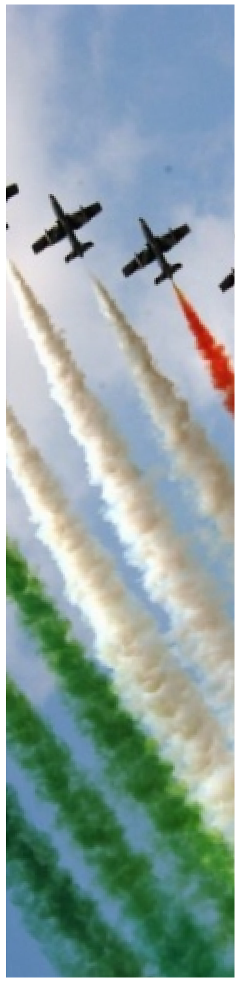

ज़िन्दगी

ज़िन्दगी
एक कैनवास है
रंग है जहाँ
खुशी, दर्द, गम,
मैं, जब भी ज्यादा खुश होता हूँ
तो, ऐसा लगता है जैसे
किसी ने
इस कैनवास में
चटख व प्यारे रंग भर दिए हैं
बिलकुल किसी इंद्रधनुष की तरह
पर, जब मैं उदास होता हूँ
तो लगता है जैसे
किसी उपेक्षित चित्रकार ने
बेमन से काली, आड़ी तिरछी रेखाएं
खींच दी हों
फिर भी ये कैनवास अपनी जगह
खड़ा है
केवल इस आशा में
कि
कभी तो इन काली , आड़ी तिरछी रेखाओं
की स्याही खत्म होगी
और
वो एक बार फिर रंगो से
संवर जायेगा
ठीक किसी इंद्रधनुष की तरह!!!

अश्विनी श्रीवास्तव

साहित्यिक विधा-गज़ल

गजल उर्दू की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है। इसी पर उर्दू काव्य की लोकप्रियता टिकी हुई है। उर्दू का हर शायर, वह चाहे किसी और विधा में रचना करने में दक्ष क्यों न हो, गजल अवश्य लिखता है। कसीदा के सम्राट कहे जाने वाले शायर मिर्जा सौदा को तो यह बात जीवन भर सालती रही कि लोग उनके कसीदों की तो बड़ी तारीफ करते हैं लेकिन उनकी गजलों पर कोई विशेष ध्यान नहीं देता-

लोग कहते हैं कि सौदा का कसीदा है खूब
उनकी ख़िदमत में लिये मैं ये गज़ल जाऊँगा।

लोगों की ख़िदमत में गजल लेकर जाने की यह ख़्वाहिश सौदा की ही नहीं वरन्, हर शायर की होती है। गज़ल की महफिलें रंगीन होती हैं, मुशायरे जवां होते हैं और लोगों के दिलों की धड़कनें बढ़ जाती हैं। गम के लम्हों में गजल ही सुकून देती हैं। फिराक गोरखपुरी कहते हैं-'गजल के साज उठाओ बड़ी उदास है रात।'

उर्दू को यह लोकप्रिय विधा फारसी से प्राप्त हुई। लेकिन इसे सुगंध मिली हिंदुस्तानी मिट्टी से। गज़ल का शाब्दिक अर्थ है- प्रेमिका से वार्तालाप। इसी से जाना जा सकता है कि गज़ल की मूल चेतना और संवेदना क्या है तथा इसकी लोकप्रियता का राज क्या है? प्रेमिका से बातचीत के रूप में व्याख्यायित होने के करण गज़ल का प्रधान विषय प्रेम ही माना गया। इसमें इश्क और हुस्न को ही नाना रूपों में चित्रित करने की ऐसी परंपरा चली कि दीर्घकाल तक गज़ल केवल महबूब और महबूबा की बेवफाई के हसीन ख्यालों, मधु-तिक्त दास्तानों और विचारों से ही समृद्ध होती रही। उर्दू शायरों ने गज़ल का संपूर्ण विषय, तत्संबंधी शब्दावली, अप्रस्तुत विधान (उपमा, रुपक, प्रतीक) आदि सभी चीजें फारसी साहित्य से ही ग्रहण कर लीं। लैला मजनूं और शीरी फरहाद के इश्क के किस्से, गुल-वो-बुलबुल की रंगीन कहानी, शमा और परवाना का रहस्यमय प्रेम, प्रेमिका की सौन्दर्य-प्रभा, उसका जुल्मो सितम, बेवफाई का शिकवा, आशिक की सच्चाई की प्रशंसा और प्रेमिका के नख-शिख सौन्दर्य की वर्णन-पद्धति आदि बातें फारसी से ही ग्रहण की गई। जुल्फ, खाले सियह (काला तिल), नोके मिजगां (बरौनी), लबे लाली (होंठ की लाली) आदि प्रेमिका के अंग-प्रत्यंग की सौन्दर्य कल्पनाएं भी फारसी से ही लेकर उर्दू कवियों नें अपनी गज़लों को हर दिल अज़ीज़ माशूका के रूप में प्रस्तुत किया। यह वास्तव में उर्दू कवियों द्वारा गज़ल में किया गया ऐसा करिश्मा था जिसकी मिसाल शायद ही किसी भाषा-साहित्य के इतिहास में मिले। विदेशी भाषा-साहित्य से विषय, शैली, शब्द संपदा तथा रूप-विधान की पद्धतियाँ ग्रहण करके एक नयी काव्यधारा प्रवाहित करना और उससे जनता को सम्मोहित कर लेना वास्तव में एक करिश्मा है। इस पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए मौलाना हुसैन आजाद ने लिखा है- आश्चर्य है कि उसने इतनी भाव भंगी और रूप लावण्य दिखलाया कि हिंदी भाषा के खयालात जो खास इस देश की परिस्थितियों के थे, उन्हें भी मिटा दिया। अत: विशेषज्ञ तथा सर्वसाधारण सभी लोग पपीहे और कोयल की आवाज और चम्पा-चमेली की खुशबू को भूल गये और बुलबुल, जिन्हें कभी देखा भी न था, की प्रशंसा करने लगे।

मिर्जा गालिब

जब कि तुझ बिन नहीं
कोई मौजूद फिर ये
हंगामा ऐ खुदा क्यों है

गज़ल का हर शेर स्वयं पूर्ण होता है। इसके दो बराबर के टुकड़े होते हैं, जिनकों मिसरा कहते हैं। जितने शेरों का आखिरी शब्द एक हो और उसके पहले का शब्द एक ही आवाज़ का हो, उनको एक साथ लिखा जाता है और ऐसे पांच या उससे अधिक शेरों के संग्रह को गज़ल कहते हैं। हर शेर के अंत में जितने शब्द बार-बार आयें उनको 'रदीफ' और रदीफ के पहले के एक ही आवाज़ वाले शब्दों को 'काफ़िया' कहते हैं जैसे मीर के इस शेर- पत्ता-पत्ता बूटा-बूटा हाल हमारा जाने है। जाने न जाने गुल ही न जाने बाग तो सारा जाने है। 'जाने है' रदीफ है और 'हमारा' तथा 'सारा' काफ़िया है।

अक्सर गज़ल के पहले शेर के दोनों मिसरे एक ही काफिया और रदीफ में होते हैं। ऐसे शेर को 'मतला' कहते हैं। अंत में जिस शेर में शायर का उपनाम या तखल्लुस हो, वह मक्ता कहलाता है।

उर्दू के गजलकार विदेशी साहित्यिक संपदा के बल पर हिंदुस्तान में अपनी धाक जमाने में इसलिए सफल हुए क्योंकि उनकी गज़लें जिस भाव-संपदा पर आधारित थीं, वे हर देश-काल के मनुष्य की आधारभूत भावनाएं हैं जिन पर उसकी जिंदगी का सुख-दुख निर्भर करता है। हर व्यक्ति में सौन्दर्य के प्रति स्वाभाविक ललक होती है और हर व्यक्ति में प्रेम करने या किसी का प्रेमास्पद होने की हसरत होती है। उर्दू गज़लों में प्रेम, जीवन की मिठास,

कोमलता, समर्पणशीलता, तन्मयता आदि के साथ-साथ विरह की तड़प, बेचैनी, उदासी, निराशा, हताशा, निष्ठुरता, उपेक्षा, प्रतीक्षा, प्रेमिका का अत्याचार, गिला-शिकवा आदि को इतने मार्मिक ढंग से और इतनी विविधता के साथ चित्रित किया गया है कि उनमें हर व्यक्ति को अपनी जिंदगी का सुख-दुख पर्याप्त यथार्थता के साथ मिल जाता है। जिससे तादात्म्य स्थापित करके उसे एक बार जीने का या तो उत्साह मिलता हो या जिससे टूटे हुए दिलों को राहत मिलती हो, जिससे जीने के लिए अपनी ही जैसी एक और दुनिया हासिल होती हो, जिससे अपने जज्बातों को कहने की सुविधा होती हो, उसके प्रति लोगों का दिलो-जान से कुर्बान होना कोई आश्यर्चजनक घटना नही है।

ग़ज़ल की दुनिया को इतने लम्बे समय तक लोकप्रिय बनाये रखने में शायरों के अंदाजे-बयां ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। एक ही काव्य विषय पर निरंतर ग़ज़लें लिखी जायें ओर उनसे ऊब न पैदा हो, नीरस न हो, तो इसका एक ही कारण है कि उन्हें हर शायर अपने रंग-ढंग के साथ प्रस्तुत करके हमेशा नया और आकर्षक बनाये रखने में ही अपनी कलात्मक निपुणता का परिचय देता रहा है। जब ग़ालिब यह कहते हैं कि ग़ालिब का है अंदाज़े बयां और तो वे हमारा ध्यान इसी सत्य की ओर खींचते हैं। दरअसल उर्दू कविता विशेष रूप से ग़ज़ल, बात कहने के ढंग पर ही अपनी नवीनता बनाये रखने में सफल हुई है। इसी से उसमें बराबर नया स्वाद, नया अर्थ और नया अंदाज़ पैदा हुआ है। जैसे हर प्रेमिका अपने ढ़ंग से अपने हाव-भाव दिखाती है, अपने ही ढ़ंग से प्रेमी को नचाती, रिझाती और खिझाती है उसी तरह हर शायर की ग़ज़ल, उसकी हर बात अपने ही ढ़ंग से लोगों पर असर डालती है।

यह सही है कि आरंभिक ग़ज़ल की दुनिया इश्क और मोहब्बत तक सीमित रही लेकिन बाद में इश्क मिजाजी के साथ-साथ इश्क हकीकी को स्थान देकर उसे आध्यात्मिक संवेदना से भी संबलित किया गया। अनेक बड़े शायरों ने जीवन, जगत, ईश्वर आदि से संबंधित अपने विचारों से ग़ज़ल में बढ़ती हुई प्रेम वासना को आध्यात्मिकता की ऊँचाइयों से थोड़ा रोका फलस्वरूप उर्दू ग़ज़ल केवल प्रेमिका की गुफ़्तगू न रहकर आध्यात्मिक विचारों की गूढ़ता को भावात्मकता के साथ प्रस्तुत करने का भी माध्यम बन गई। इस दृष्टि से दर्द और मिर्जा गालिब का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

उर्दू में ग़ज़ल विधा को लोकप्रिय बनाने और उसकी अबाध परंपरा कायम करने का श्रेय दक्षिण के प्रसिद्ध शायर वली औरंगाबादी को है जिनकी सीधी-सादी, प्रभावपूर्ण और मार्मिक ग़ज़लों ने दिल्ली के फारसी विद्वानों और शायरों के ऊँचे सिंहासनों को हिला दिया और उन्हें उर्दू ग़ज़ल लिखने के लिए बाध्य कर दिया। शाह मुबारक आबरू फुगां ताबां, मजहर आदि शायरों ने दिल्ली में उर्दू ग़ज़ल की नींव डाली, बाद में उसी नींव पर मीर, सौदा, सोज, दर्द आदि ने उर्दू ग़ज़ल की वह भव्य इमारत तैयार की जिसकी कलात्मकता, भाव-प्रवणता और मार्मिकता पर हर कोई अपनी जान न्योछावर करता है। मीर ने वह रंग और अंदाज पैदा किया जिसको पाना बाद के शायरों के लिए बहुत मुश्किल हो गया। मीर ग़ज़ल के बादशाह के रूप में प्रतिष्ठित हुए और गालिब जैसे ग़ज़लगों ने भी उनकी उस्तादी को स्वीकार करते हुए लिखा है-

'रेख्ते के तुम्हीं उस्ताद नहीं हो गालिब
कहते हैं अगले ज़माने में कोई मीर भी था।
और जौक ने लिखा है-
न हुआ पर न हुआ मीर का अंदाज़ नसीब
जौक यारो ने बहुत जोर ग़ज़ल में मारा।'

दिल्ली के मोमिन, जौक गालिब और ज़फर ने उर्दू गजल को शिखर तक पहुँचा दिया। दिल्ली में अहमदशाह अब्दाली, नादिरशाह दुर्रानी के आक्रमणों, लूटपाट और अंग्रेजों-मराठों के युद्ध से जो व्यापक तबाही हुई, उसके एहसासपरक चित्र मीर, सौदा, जौक आदि की गजलों में देखे जा सकते हैं। इन घटनाओं के कारण जब दिल्ली उजड़ी तो बहुत सारे शायर लखनऊ चले गये। वहाँ उन्होंने उर्दू कविता का माहौल बनाया और देखते-देखते लखनऊ उर्दू शायरी का केन्द्र बन गया। यहाँ पर नवाबों की श्रृंगारिकता और विलासिता ने उर्दू ग़ज़ल पर अपना ऐसा रंग चढ़ाया कि ग़ज़ल प्रेम की सात्विकता और उदात्तता के सिंहासन से गिरकर वासना के कीचड़ में लोटने लगी। लखनऊ के मुसहफी, इंसा, जुरअत, नासिख और आतिश ने लखनवी उर्दू ग़ज़ल का एक नया रंग रूप तैयार किया और एक बार फिर ग़ज़ल को महबूबा की जुल्फों और उसकी कातिल अदाओं के सितम की हसीन दास्तान बना दिया।

मौलाना अल्फात हुसैन हाली ने ग़ज़ल के वस्तु क्षेत्र को विस्तृत करने के लिए लोगों का ध्यान इस सत्य की ओर आकृष्ट किया कि ग़ज़ल जैसी सशक्त विधा में जीवन की तमाम वास्तविकताओं को मार्मिक ढ़ंग से चित्रित किया जाना चाहिए क्योंकि एक खास विषय पर निरंतर ग़ज़लों की रचना

होते रहने से न केवल इससे ऊब पैदा होगी, बल्कि इसका जीवन भी संकटग्रस्त हो जायेगा। हाली के विचारों के प्रभाव स्वरूप और युगीन चेतना के दबाव के कारण आधुनिक काल में ग़ज़ल की अंतर्वस्तु और चेतना में परिवर्तन आया। यद्यपि उससे इश्क और हुस्न की दिलकश दास्तान गायब नहीं हुई किन्तु उसमें समसायिक सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक प्रश्नों एवं संदर्भों को भी अभिव्यक्ति मिलने लगी। वर्तमान स्थिति में ग़ज़ल को माशूका की गुफ्तगू नहीं कहा जा सकता। वह अब दिल की दास्तान की अपेक्षा युग की दास्तान हो गयी है।

हिंदी नवजागरण के दौर के अनेक हिंदी कवियों ने ग़ज़लें कहीं। स्वयं भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने जो ब्रजभाषा में कवितायें लिखते थे, ग़ज़लें कही हैं और उन्हें खड़ी बोली में लिखा है। उर्दू में उनका तखल्लुस रसा था। जयशंकर प्रसाद, निराला और दिनकर जैसे आरंभिक हिंदी कवियों ने भी ग़ज़ल लिखी हैं।

आधुनिक काल में उर्दू ग़ज़ल का चरित्र बदल गया और वह आशिक और माशूक की वफाई-बेवफाई से थोड़ा आगे निकल कर युग की दास्तान बन गयी। अकबर इलाहाबादी, चकबस्त, इकबाल, जोश, फैज, फिराक आदि ने ग़ज़ल को नये भावों और विचारों से समृद्ध करके उसे नयी चेतना प्रदान की। स्वतंत्रता के बाद तो उर्दू ग़ज़ल का भाववादी चरित्र यथार्थवादी हो गया और उसमें देश की सामाजिक, राजनीतिक एवं वैयक्तिक समस्याओं को यथार्थ-शैली में प्रस्तुत किया जाने लगा। कहना न होगा कि समकालीन ग़ज़ल जीवन के व्यापक यथार्थ से जुड़ गयी है। हिंदी ग़ज़ल को प्रगतिवाद का स्वर देने वालों में दुष्यंत कुमार का नाम सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। कमलेश्वर ने बिलुकल ठीक कहा है कि अगर दुष्यंत कुमार नहीं होते तो हिंदी ग़ज़ल भी नहीं होती...भारतेन्दु, हरिऔध, निराला, शमशेर, त्रिलोचन उसे रूपाकार नहीं दे पाए थे...लेकिन इसके बावजूद हिंदी ग़ज़ल को मात्र भाषाई सीमा में कैद करके देखना गलत है। उसे पूरी दकनी एशियाई सभ्यता के महत् और सांस्कृतिक स्वर के रूप में पहचाना जाना चाहिए जो अरब को ईरान से, ईरान को भारत से और भारत को मिस्र, लीबिया, इराक, अफगानिस्तान और आज के पाकिस्तान से जोड़ती है।

राजनीतिक इकाइयाँ टूट सकती हैं, लेकिन सांस्कृतिक सच्चाइयाँ नहीं टूट सकतीं। और ग़ज़ल ने इसी सांस्कृतिक सच्चाई को जीवित रखा है। पाकिस्तान के न जाने कितने ग़ज़लगों और ग़ज़ल गायक भारत की जनता के सरताज बने हुए हैं।

बहरहाल, आज की ग़ज़ल, वह चाहे उर्दू की हो या हिंदी की, जन चेतना से लैस होकर अपने सामाजिक दायित्व का बखूबी निर्वाह कर रही है। अब वह जमाने की आवाज़ और चेतना बन गयी है।

ग़ज़ल एक संगीत प्रधान और भाव-प्रवण विधा रही है। इसके छोटे से कलेवर में सीमित अर्थ भरने की कुशलता शायरों की कला की कसौटी मानी जाती थी। कोमलकांत पदावली, सरस भाव व्यंजना, अर्थ सघनता, सांकेतिकता, ध्वन्यात्मकता आदि इसकी कुछ ऐसी विशेषताएं है जिनसे हर संवेदनशील व्यक्ति सहज ही प्रभावित हो जाता है और उसे गुनगुनाना चाहता है। वर्तमान काल में ग़ज़लों के यथार्थवादी चरित्र के कारण यथार्थ का खुरदुरापन उसका सौंदर्य बनता जा रहा है। अब यह गमों पर मरहम लगाकर व्यथित व्यक्ति को सुलाने की जगह उसे जगाने और कर्मक्षेत्र में संघर्ष करके अपनी तकदीर बदलने की प्रेरणा देने का कार्य कर रही है।

राजभाषा प्रकोष्ठ

साभार-डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली

बाबा फरीद

एक व्यक्ति ने संत फरीद से पूछा-महाराज, मैं अपनी बुरी आदतें छुड़ाने के लिए क्या करूँ? संत फरीद बोले-बेटा मैं तुम्हें इसकी युक्ति तो बाद में बताऊँगा क्योंकि अभी तो मुझे तुम्हारा अंत समय निकट दिखाई पड़ता है। तुम्हारे जीवन में मात्र एक माह बचा है। इतना सुनते ही वह व्यक्ति चिंता में डूब गया और उसने शेष माह मात्र प्रायश्चित और भजन करने में गुजारा। उन्तीसवें दिन संत फरीद नें उसे अपने पास बुलाया और उससे पूछा-बेटा तेरी बुरी आदतों का क्या हुआ? उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, महाराज मेरे ऊपर मौत का भय इतना ज्यादा था कि सारी बुरी आदतें अपने आप छूट गई। संत फरीद बोले-हर घड़ी मृत्यु को याद रखकर कर्म करोगे तो कभी भी बुरा कार्य नहीं हो सकेगा। तुम्हारा जीवन अभी शेष है, इसी सोच को लेकर जीवन जीओ। उस व्यक्ति का जीवन सदा के लिए बदल गया।

राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में हिन्दी

किसी भी सभ्य समाज में या राष्ट्र में विचार-विनिमय के लिए एक ऐसी भाषा की जरूरत होती है जो संपूर्ण समाज या राष्ट्र में समान रूप से समझी और बोली जाए। सर्वसाधरण से लेकर शिक्षित वर्ग तक सभी के द्वारा प्रयुक्त होने वाला हिंदी का सर्वमान्य रूप राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकृत है। इस तरह अपने दोनों स्वरूपों, यथा राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में हिंदी भाषा अपना दायित्व सहजता से निभा रही है क्योंकि इनमें अन्त:संबंध है।

प्राचीन काल से हिंदी में साहित्य सृजन एवं शिक्षण की एक लंबी और समृद्ध परंपरा हम सबके सम्मुख रही है। लंबी साहित्यिक परंपरा के साथ-साथ लोक व्यवहार में भी संपूर्ण भारत को समेटती हुई हिंदी 'संपर्क भाषा' के रूप में प्रतिष्ठित है। साथ ही पिछले कई दशकों से 'राजभाषा' के रूप में भी हिंदी अपने अस्तित्व-संघर्ष के लिए प्रयत्यशील रही है। प्राय: सभी प्रदेशों में प्रचलित रहने के कारण हिंदी संपूर्ण भारत की राष्ट्र भाषा रही है। हालांकि मुगल शासन काल में फारसी को प्रभुत्त्व मिला था तथापि हिंदी ही देश की स्वीकार्य भाषा बनी रही। अंग्रेजों के शासनकाल में अंग्रेजी का प्रभुत्व स्थापित हुआ लेकिन भारतीय समाज में हिंदी का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान बना रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संवैधानिक तौर पर हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया क्योंकि यह देश के प्राय: सभी भागों में संपर्क के लिए बोली और समझी जाती रही।

भारत में सन 1947 में संविधान सभा का गठन हुआ। उसी समय यह निर्णय लिया गया कि सभा के कामकाज की भाषा हिंदुस्तानी या अंग्रेजी होगी। बाद में हिंदुस्तानी के स्थान पर 'हिंदी' शब्द रखा गया। संविधान सभा की 11 से 14 सितंबर 1949 की बैठक में 'देवनागरी' में लिखित हिंदी को संघ की राजभाषा स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार संविधान में राजभाषा से संबंधित कई व्यवस्थाएं बन गई:-

राजभाषा हिंदी

14 सितम्बर, 1949 से लेकर आज तक संवैधानिक प्रावधानों एवं संकल्पों के आधार पर 'राजभाषा' के रूप में हिंदी प्रतिष्ठित है। संवैधानिक स्तर पर भी हिंदी के अनुप्रयोगात्मक आयामों को सरकारी तथा गैर सरकारी कार्यालयों आदि में अपनाने पर जोर एवं प्रोत्साहन दिया जाता रहा है। प्रशासनिक, कार्यालयी व व्यावसायिक स्तरों पर हिंदी को प्रयोग में लाने के लिए आज शब्दावली निर्माण के साथ-साथ हिंदी में कार्य करने के लिए कम्प्यूटर, टेलीप्रिंटर एवं अन्य यांत्रिक साधनों की व्यवस्था तथा सुविधएं प्रदान की जा रही हैं।

भारतीय संविधान के अंतर्गत अनुच्छेद 120 (1) और अनुच्छेद 343 से लेकर अनुच्छेद 351 तक संघ की राजभाषा के लिए कई प्रावधान किये गये हैं। इसका प्रारंभिक उल्लेख-अनुच्छेद 343 (1) में इस प्रकार हुआ है- 'संघ' की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।

उसी अनुच्छेद के खण्ड (2) में यह व्यवस्था की गई है कि इस संविधान के आरंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के प्रशासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग होता रहेगा।
अनुच्छेद 120 (1) के तहत संसद की कार्यवाही हिन्दी अथवा अंग्रेजी भाषा में चलाने की व्यवस्था की गई । इसके अतिरिक्त सदस्य विशेष को सभापति या अध्यक्ष की अनुमति से अपनी मातृभाषा में विचार व्यक्त करने का प्रावधान भी किया गया।

अनुच्छेद 351 संविधान विषयक भाषा नीति का मुख्य अंग है। इसके अनुसार संघ सरकार का कर्तव्य है कि वह हिंदी भाषा के विकास एवं प्रसार-प्रसार हेतु प्रयत्न करेगी जिससे वह सारे देश में प्रयुक्त हो सके। साथ ही हिन्दी में अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को समाहित कर उसके शब्द भंडार को समृद्ध किया जाए।

सन 1963 में संसद द्वारा राजभाषा अधिनियम पारित किया गया और उसके पश्चात राजभाषा (संशोधित) अधिनियम 1967 द्वारा घोषणा की गई कि 26 जनवरी 1965 से हिंदी राजभाषा के रूप में कार्य करेगी साथ ही अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी सह राजभाषा के रूप में होता रहेगा।

सन 1976 में राजभाषा नियम बने । इन नियमों का विस्तार एवं प्रभाव तमिलनाडु राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत पर है। भारत सरकार द्वारा समय-समय पर विभिन्न मंत्रालयों से आग्रह किया जाता है कि वे कृषि, चिकित्सा, मानविकी, रेल, सूचना, प्रसारण-विज्ञान, इंजीनियरिंग, विधि एवं गणित आदि विषयों के लिए हिन्दी भाषा में तकनीकी शब्दावली तैयार करें। इसके अतिरिक्त टाइपराइटर, टेलीप्रिंटर, कम्प्यूटर आदि की सहायता से भी कार्यालय स्तर पर राजभाषा हिंदी को बढ़ावा दिया जाए। यद्यपि प्रादेशिक प्रशासन के स्तर पर दिल्ली, हिमाचल, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड तथा बिहार में राजभाषा हिंदी का प्रयोग किया जा रहा है फिर भी वर्तमान स्थिति को पूरी तरह संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। हिंदी दिवस मना लेना ही पर्याप्त नहीं है। हिन्दी भाषा का व्यापक प्रचार-प्रसार एवं इसके प्रयोग की गति को बढ़ावा देने की महती आवश्यकता है ।

राष्ट्रभाषा हिंदी

राष्ट्रभाषा का संबंध राष्ट्रवादिता से माना जाता है। जब किसी राष्ट्र की कोई एक भाषा विभिन्न राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कारणों से समग्र राष्ट्र के सार्वजनिक प्रयोग में आ जाती है तो वह राष्ट्रभाषा कहलाती है। राष्ट्रभाषा की सबसे खूबसूरती इस बात में निहित होती है कि वह देश की अन्य भाषाओं को बिना उनकी प्रगति में बाधक बने उनको अपने साथ लेकर चलने में समर्थ होती है। जब कोई भाषा यह मुकाम हासिल कर लेती है तो वह राष्ट्रभाषा कहलाती है। हिंदी ने एक लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया से गुजर कर राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त किया जिसके फलस्वरूप आज हिन्दी भाषाः बंगाली, मराठी, गुजराती, कन्नड़ जैसे अहिंदी भाषी क्षेत्रों में भी लोकप्रिय होती जा रही है।

वास्तव में विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक कारणों से हिंदी प्राचीनकाल से ही अपने विविध रूपों में भारत के प्राय: सभी प्रदेशों में प्रचलित रही है। बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी में यह केवल एक बोली के रूप में अपने मूल स्थान दिल्ली, मेरठ के आस-पास तक सीमित थी।

लगभग छ:-सात सौ वर्षों तक यह केवल बोली के रूप में प्रचलित रही । हिन्दी भाषा की तुलना में अन्य बोलियाँ जैसे अवधी, ब्रज आदि अधिक विकसित हुईं और 'भाषा' के रूप में उच्च साहित्य का माध्यम बनीं। मुगल काल में फारसी का प्रभुत्त्व रहा तथा अंग्रेजों के शासनकाल में अंग्रेजी का प्रभुत्त्व स्थापित हुआ लेकिन उस समय भी भारतीय समाज में हिंदी का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान बना रहा। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध से ही ऐसी परिस्थितियाँ बनती गईं जिनके कारण खड़ी बोली ने अत्यंत तीव्रता से भाषा का दर्जा प्राप्त किया और लगभग सौ वर्ष के अन्दर ही हिंदी का मानक स्वरूप निर्धारित हो गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संवैधानिक तौर पर हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया क्योंकि यह देश के अधिकांश भागों में बोली और समझी जाती थी। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक दृष्टि से हिन्दी भाषा का विशेष महत्त्व है। भारत में ही नहीं विदेशों में भी इसके प्रयोक्ताओं की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। मारीशस, सूरीनाम, नेपाल, रूस, जर्मनी तथा कई यूरोपीय देशों में भी शिक्षण तथा साहित्य के स्तर पर हिंदी का प्रचार-प्रसार हुआ है। राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान हिन्दी 'राष्ट्रभाषा' के रूप में विकसित हुई। संपूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के आंदोलन में अहम भूमिका निभाने वाली हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' के रूप में स्वीकार किया गया।

उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय विकास में उस देश की राष्ट्रभाषा के अतिरिक्त वहाँ की राजभाषा का भी विशिष्ट महत्त्व होता है। दोनों में अंतर यह है कि राष्ट्रभाषा का विकास स्वत: स्फूर्त और प्रवाहमान होता है जबकि राजभाषा का निर्धारण उस देश की विधायिका द्वारा किया जाता है। राजभाषा प्रशासनिक प्रयोजनों की भाषा होती है किन्तु किसी भाषा को राष्ट्रभाषा का पद जनमानस के व्यवहार के बिना नहीं मिलता।

समृद्ध देशों में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और सम्पर्क भाषा के रूप में एक ही भाषा का प्रयोग होता है, जैसे जापान, अमेरिका, इंग्लैण्ड, फांस, जर्मनी, रूस आदि देश। इस दृष्टि से भारतवर्ष भी एक समृद्ध देश है क्योंकि यहाँ पर भी हिंदी ही अपने तीनों रूपों में प्रयुक्त होती है। हिंदी ही राष्ट्रभाषा भी है और राजभाषा भी तथा सम्पर्क भाषा भी। विश्व के अनेक देशों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार हो रहा है। हिंदी की गुणवत्ता का अनुभव सभी राजनीतिज्ञों, शिक्षाविदों, विद्वानों और लेखकों ने किया है। किन्तु हिन्दी के प्रगामी विकास की दिशा में सबसे बड़ी बाधा इसके प्रयोग और व्यवहार के स्तर पर उपेक्षा और उदासीनता की है यदि हम हिन्दी भाषा के प्रयोग एवं इसके व्यवहार प्रति अपनी उदासीनता एवं मानसिकता को त्याग दें तो फिर सही अर्थों में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा का दर्जा दिलाया जा सकता है ।

राजभाषा प्रकोष्ठ
भा.प्रौ.सं.कानपुर

पाती

अंतस पत्रिका का मिला, छब्बीस जनवरी अंक,
मन-मानस पुलकित हुए, अंतर्मन हो उठा निशंक।
अंतर्मन हो उठा निशंक, दिखा आवरण आकर्षक,
संपादकी, स्वच्छ मुद्रण व लेख-गीत चित्ताकर्षक।।
प्रौद्योगिकी संस्थान पर है भारतवर्ष को नाज,
देश-विदेश में है, फैला इसका यश आज।
फूले-फले पत्रिका, भाषा-ज्ञान भरे अंतस,
हिंदी-गौरव बन कर, अहर्निश चमके अब अंतस।।

डॉ. दुर्गा चरण मिश्र

मैं यूँ तेरी आहट

मैं यूँ तेरी आहट महसूस कर रहा हूँ...
है कागज, कलम, स्याही फिर भी खाली
पन्ने पलट रहा हूँ..
तू नहीं वो तेरा अक्स है,
जो है मेरी यादों में तू ही वो शख़्स है,
बस तुझमें मेरी शख़्सियत को ढूँढ रहा हूँ
मैं यूँ तेरी आहट महसूस कर रहा हूँ...

तू मिला मुझे नसीब से,
मैं जानता हूँ तुझे करीब से,
तेरी अहमियत को यूँ मैं अब समझ रहा हूँ...
मैं यूँ तेरी आहट महसूस कर रहा हूँ...

मेरी हर बात में तू है,
मेरी खामोशी में तू है,
तू कह या न कह कुछ,
मैं बस तुझी को सुन रहा हूँ,
मैं यूँ तेरी आहट महसूस कर रहा हूँ...

मैं गाऊँ जो गीत तेरा है,
बजाऊँ जो संगीत तेरा है,
बस तेरे हर साज़ को लाई मैं डाल रहा हूँ,

उठती-झुकती पलकों में तू,
साँस के आने-जाने में तू,
बस मेरी धड़कनों में तेरी धड़कनों को
पिरो रहा हूँ,
मैं यूँ तेरी आहट महसूस कर रहा हूँ...

महकती हवाओं में तू,
बहकती घटाओं में तू,
तेरे आस-पास होने के सुकून ढूँढ रहा हूँ...

मेरी वफा में तू, मेरी हर रजा में तू,
मेरी इबादत में तू, मेरे जज़्बात में तू,
मैं हूँ शुरु तुझसे,
मैं ख़तम भी हूँ तुझसे..

तू मेरा दिन, तू ही रात ,

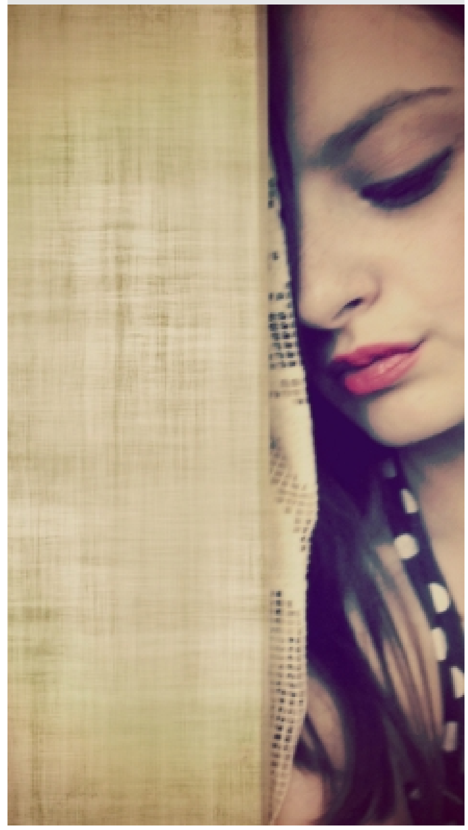

तू लफ्ज मेरे, तू ही अल्फ़ाज,
तू रौशनी, जो दिखाए रास्ता,
तू है वो साथी, जो चलाए रास्ता...
तू है तो मैं हूँ, तेरे बिना मैं कौन हूँ,
अब धीरे-धीरे स्याही भी फीकी हो रही है...
कलम की धार और तीखी हो रही है....
फिर भी पन्ने, दर पन्ने, तेरी हर बात,
मैं यूँ तेरी आहट महसूस कर रहा हूँ...

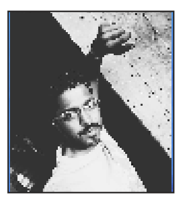

शोएब ईनामदार
परियोजना अभियंता

पाती

अन्तस के पिछले अंक के लिए मैंने कुछ कविताएँ प्रेषित की थी। उनमें से एक कविता 'बचाएँ धरती मात को' प्रकाशित हुई। इस से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। मेरी एक छोटी सी रचना को अंतस पत्रिका में स्थान प्रदान करने के लिए मैं अपने अंतर्मन से अंतस परिवार का आभार प्रकट करता हूँ।

हरिराम रेगर

जल कण

जल का एक नन्हा कण समुद्र के अंक से उछल-उछल कर आकाश में ऊँचा उठने का प्रयास करता फिर पुन: लहरों की गोद में समा जाता। अंतत: एक दिन उसे सूर्य की धूप ने अतिरिक्त ऊर्जा दी और वह कण सुख पूर्वक इधर-उधर विचरण करता रहा और अपने जैसे बहुत से अन्य कणों के साथ मिलता बिछुड़ता पर्यटन करता रहा। उसके स्वप्नों को जैसे पंख मिल गये थे, उन्मुक्त, उन्मत्त, वह अपनी स्वच्छन्दता का उत्सव मना रहा था। पर कुछ ही दिवसों में उसे मन में कहीं शून्यता का अनुभव होने लगा। उसे लगने लगा कि उसकी गुरुता कहीं न्यून हो गयी है। हवा की एक हल्की सी थपकी उसे सुदूर कहीं फेंक देती। उसे याद आये फिर वे दिन जब समुद्र में उसके वेग को निहार मनुष्य तक आह्लादित हुआ करते थे। जब समुद्र के किनारे विभिन्न परिधानों में सजे संवरे बच्चे, बूढ़े, युवक-युवतियाँ उसके दर्शन का घंटों आनन्द लेते हुये किनारों पर घूमते थे। उसे कचोटने लगे वे सुनहरे दिन जब समुद्र में नित नयी मछलियाँ, नित नये कछुए, नित नये पौधे उसके साथ अठखेलियाँ करते थे। यह आकाश, यह ऊँचाई, यह विस्तार, सब उसे नीरस लगने लगा। हवा के थपेड़ों और सूर्य की गर्मी के अतिरिक्त यह स्वच्छन्दता सबसे बड़ा बंधन लगने लगी। यदि कुछ था तो यदा-कदा दुर्दम्य गति से आते विमान जो इन वाष्प कणों को चीरते हुए, इनका उपहास उड़ाते हुए, इनसे भी ऊपर निकल जाते। उसकी वेदना असह्य होती गई। फिर पूरी शक्ति के साथ उसने चीत्कार भरी-

मुझे नहीं चाहिये ये ऊँचाई
मुझे नहीं चाहिए ये आकाश !
मुझे नहीं चाहिए ये स्वच्छन्दता !!

पर यह क्या, उसकी चीत्कार लक्ष गुणित होकर सारे वातावरण में प्रतिध्वनित हो रहा था। उसने चकित होकर दृष्टि फैलायी। हर ओर से उस जैसे सूक्ष्म वाष्पकण चीत्कार भर रहे थे-नहीं चाहिए ये आकाश !!!
नहीं चाहिए ये स्वच्छन्दता !!!!
हमें धरती पर वापस जाना है !!!!!
हमें मनुष्यों के साथ रहना है !!!!!!

चतुर्दिक चीत्कार भरते ये वाष्प कण एक-दूसरे के आलिंगन पाश में बद्ध होकर अपनी गुरुता बढ़ाने लगे और वह समय आ गया जब वे पुन: जल-कण बन हवा के थपेड़ों को निष्प्रभावी कर झूमते, गाते, आनन्द मनाते धरती की यात्रा पर चल पड़े। धरती तो कब से आँखे बिछाये इनकी प्रतीक्षा कर रही थी।

हर ओर उल्लास ही उल्लास, उत्साह ही उत्साह, आनन्द ही आनन्द। पुन: विभिन्न धाराओं से चलता हुआ यह जल-कण पहुँचा अपने उसी समुद्र के अंक में। अपने अस्तित्व को समुद्र के अस्तित्व में विलीन कर आज वह विलक्षण संतोष की अनुभूति कर रहा था।

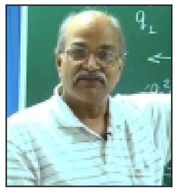

प्रोफेसर हरीश चन्द्र वर्मा
सेवानिवृत्त प्राध्यापक

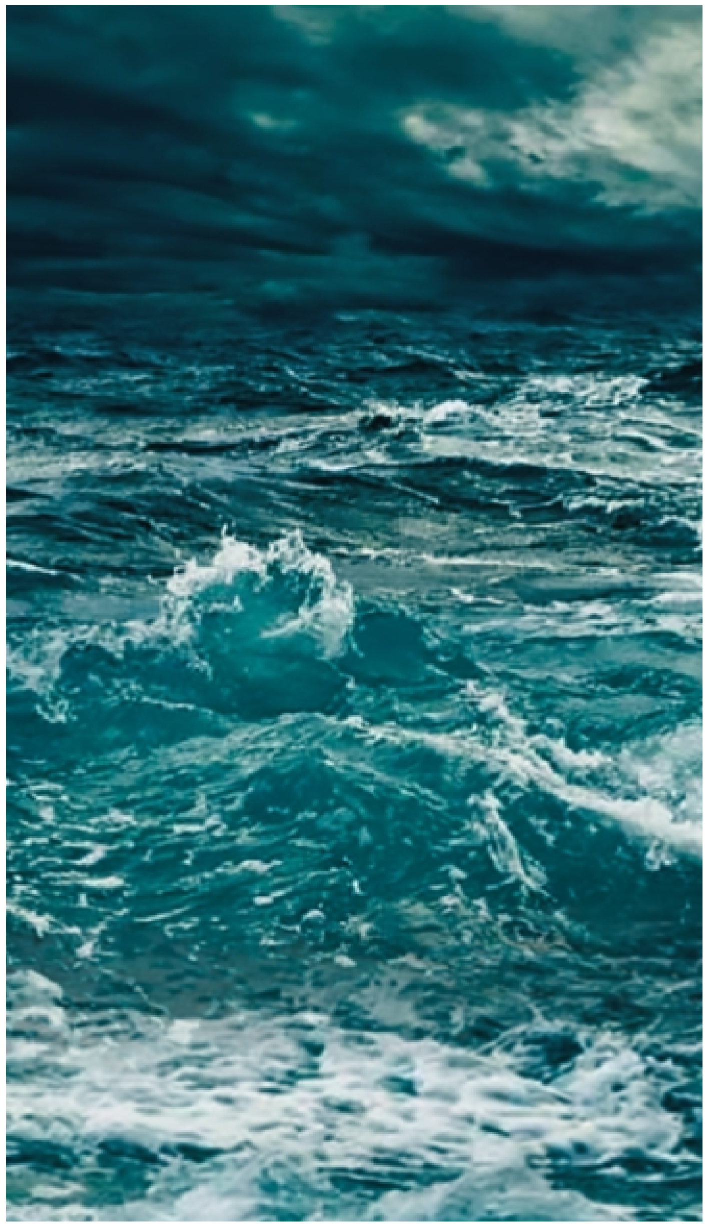

आलस्य-भक्त

अजगर करै न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गए, सबके दाता राम ।।

प्रिय ठलुआ-वृंद! यद्यपि हमारी सभा समता के पहियों पर चल रही है और देवताओं की भांति हममें कोई छोटा-बड़ा नहीं है, तथापि आप लोगों ने मुझे इस सभा का पति बनाकर मेरे कुंआरेपन के कलंक को दूर किया है। नृपति और सेनापति होना मेरे स्वप्न से भी बाहर था। नृपति नहीं तो नारी-पति होना प्रत्येक मनुष्य की पहुंच के भीतर है, किंतु मुझ-जैसे आलस्य-भक्त के लिए विवाह में पाणिग्रहण तक का तो भार सहना गम्य था। उसके आगे सात बार अग्नि की परिक्रमा करना जान पर खेलने से कम न था। जान पर खेल कर जान का जंजाल खरीदना मूर्खता ही है - 'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढ: प्रतिभासि मे त्वम्' का कथन मेरे ऊपर लागू हो जाता। 'ब्याहा भला कि क्वांरा' - वाली समस्या ने मुझे अनेक रात्रि निद्रा देवी के आलिंगन से वंचित रखा था, किंतु जब से मुझे सभापतित्व का पद प्राप्त हुआ है, तब से यह समस्या हल हो गई है। आलसी के लिए इतना ही आराम बहुत है। यद्यपि मेरे सभापति होने की योग्यता में तो आप लोगों को संदेह करने के लिए कोई स्थान नहीं है, तथापि आप लोगों को अपने सिद्धांतों को बतला अपनी योग्यता का परिचय देना अनुचित न होगा।

वैसे तो आलसी के लिए इतने वर्णन का भी कष्ट उठाना उसके धर्म के विरुद्ध है, किंतु आलस्य के सिद्धांतों का प्रचार किए बिना संसार की विशेष हानि होगी और मेरे भी पेट में बातों के अजीर्ण होने की संभावना है। इस अजीर्ण-जन्य कष्ट के भय से मैंने अपनी जिह्वा को कष्ट देने का साहस किया है।

मनुष्य-शरीर आलस्य के लिए ही बना है। यदि ऐसा न होता, तो मानव-शिशु भी जन्म से मृग-शावक की भांति छलांगें मारने लगता, किंतु प्रकृति की शिक्षा को कौन मानता है। नई-नई आवश्यकताओं को बढ़ाकर मनुष्य ने अपना जीवन अस्वाभाविक बना लिया है। मनुष्य ही को ईश्वर ने पूर्ण आराम के लिए बनाया है। उसी की पीठ खाट के उपयुक्त चौड़ी बनाई है, जो ठीक उसी से मिल जावे। प्राय: अन्य सब जीवधारी पेट के बल आराम करते हैं। मनुष्य चाहे पेट की सीमा से भी अधिक भोजन कर ले, उसके आराम के अर्थ पीठ मौजूद है। ईश्वर ने तो हमारे आराम की पहले ही से व्यवस्था कर दी है। हम ही उसका पूर्ण उपयोग नहीं कर रहे हैं।

निद्रा का सुख समाधि-सुख से अधिक है, किंतु लोग उस सुख को अनुभूत

लेखक-बाबू गुलाबराय

बाबू गुलाबराय का जन्म 17 जनवरी, 1888 को इटावा, उत्तर प्रदेश में हुआ। उनके पिता श्री भवानी प्रसाद धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। उनकी माता भी कृष्ण की उपासिका थीं और सूर, कबीर के पदों को तल्लीन होकर गाया करती थीं। माता-पिता की इस धार्मिक प्रवृत्ति का प्रभाव बाबू गुलाबराय जी पर भी पड़ा। गुलाब राय जी की प्रारंभिक शिक्षा मैनपुरी में हुई। तहसीली स्कूल के पश्चात उन्हें अंग्रेजी शिक्षा के लिए जिला विद्यालय में भेजा गया। एन्ट्रेस परीक्षा पास करने के बाद उन्होंने आगरा कॉलेज से बी.ए. की परीक्षा पास की। दर्शन शास्त्र में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात गुलाबराय जी छतरपुर चले गए और वहाँ के महाराज के निजी सचिव हो गए। इसके बाद वे वहाँ दीवान और चीफ जज भी रहे। छतरपुर महाराजा के निधन के पश्चात गुलाबराय जी ने वहाँ से अवकाश ग्रहण किया और आगरा आकर रहने लगे। आगरा आकर उन्होंने सेंट जॉन्स में हिंदी विभागाध्यक्ष के पद पर कार्य किया। गुलाबराय जी अपने जीवन के अंतिम काल तक साहित्य-साधना में लीन रहे। उनकी साहित्यिक सेवाओं के फलस्वरूप आगरा विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट. की उपाधि से सम्मानित किया। 75 वर्ष की उम्र में 13 अप्रैल, 1963 को आगरा में उनका स्वर्गवास हुआ।

करने में बाधा डाला करते हैं। कहते हैं कि सवेरे उठा करो, क्योंकि चिडियां और जानवर सवेरे उठते हैं; किंतु यह नहीं जानते कि वे तो जानवर हैं और हम मनुष्य हैं। क्या हमारी इतनी भी विशेषता नहीं कि सुख की नींद सो सकें! कहां शय्या का स्वर्गीय सुख और कहां बाहर की धूप और हवा का असह्य कष्ट! इस बात के ऊपर निर्दयी जगाने वाले तनिक भी ध्यान नहीं देते। यदि उनके भाग्य में सोना नहीं लिखा है, तो क्या सब मनुष्यों का एक-सा ही भाग्य है! सोने के लिए लोग तरसा करते हैं और सहस्रों रुपया डॉक्टरों और दवाइयों में व्यय कर डालते हैं और यह अवैतनिक उपदेशक लोग स्वाभाविक निद्रा को आलस्य और दरिद्रता की निशानी बतलाते हैं। ठीक ही कहा है - 'आए नाग न पूजिए बामी पूजन जाएं।' लोग यह समझते हैं कि हम आलसियों से संसार का कुछ भी उपकार नहीं होता। मैं यह कहता हूं कि यदि मनुष्य में आलस्य न होता, तो वह कदापि उन्नति न करता और जानवरों की भांति संसार में वृक्षों के तले अपना जीवन व्यतीत करता। आलस्य के कारण मनुष्य को गाड़ियों की आवश्यकता पड़ी। यदि गाड़ियां न बनतीं, तो आजकल वाष्प-यान और वायुयान का भी नाम न होता। आलस्य के ही कारण मनुष्य को तार और टेलीफोन का आविष्कार करने की आवश्यकता हुई। अंग्रेजी में एक उक्ति ऐसी है कि Necessity is the mother of invention अर्थात आवश्यकता आविष्कार की जननी है, किंतु वे

लोग यह नहीं जानते कि आवश्यकता आलस्य की आत्मजा है। आलस्य में ही आवश्यकताओं का उदय होता है। यदि आप स्वयं जाकर अपने मित्रों से बातचीत कर आवें, तो टेलीफोन की क्या आवश्यकता थी? यदि मनुष्य हाथ से काम करने का आलस्य न करता, तो मशीन को भला कौन पूछता? यदि हम आलसी लोगों के हृदय की आंतरिक इच्छा का मारकोनी साहब को पता चल गया, तो शीघ्र ही ऐसे यंत्र का आविष्कार हो जावेगा, जिसके द्वारा हमारे विचार पत्र पर स्वत: अंकित हो जाया करेंगे। फिर हम लोग बोलने के कष्ट से भी बच जावेंगे। विचार की तरंगों को तो वैज्ञानिक लोगों ने सिद्ध कर ही दिया है। अब कागज पर उनका प्रभाव डालना रह गया। दुनिया के बड़े-बड़े आविष्कार आलस्य और ठलुआ-पंथी में ही हुए हैं। वाट साहब ने (जिन्होंने कि वाष्प शक्ति का आविष्कार किया है) अपने ज्ञान को एक ठलुआ बालक की स्थिति से ही प्राप्त किया था। न्यूटन ने भी अपना गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत बेकारी में ही पाया था। दुनिया में बहुत बड़ी-बड़ी कल्पनाएं उन्हीं लोगों ने की हैं, जिन्होंने चारपाई पर पड़े-पड़े ही जीवन का लक्ष्य पूर्ण किया है। अस्तु, संसार को लाभ हो या हानि हो, इससे हमको प्रयोजन ही क्या? यह तो सांसारिक लोगों के संतोष के लिए हमने कह दिया, नहीं तो हमको अपने सुख से काम है। यदि हम सुखी हैं, तो संसार सुखी है। ठीक ही कहा है कि 'आप सुखी, तो जग सुखी।' सुख का पूरा-पूरा आदर्श वेदांत में बतलाया है। उस सुख के आदर्श में पलक मारने का भी कष्ट उठाना महान पाप है। अष्टावक्र गीता में कहा है-

व्यापारे खिद्यते यस्तु निमेषोन्मेषयोरपि;
तस्यालस्यधुरीणस्य सुख नान्यस्य कस्यचित(षोडश प्रकरण, श्लोक 4)।।

अर्थात् जो पुरुष नेत्रों के निमेष-उन्मेष के व्यापार (नेत्रों के खोलने-मूंदने) में ही परिश्रम मानकर दु:खित होता है, इस परम आलसी एवं ऐसे निष्क्रिय पुरुष को ही परम सुख मिलता है, अन्य किसी को नहीं।

लोग कहते हैं कि ऐसे ही आलस्य के सिद्धांतों ने भारतवर्ष का नाश कर दिया है। परंतु वे यह नहीं जानते कि भारतवर्ष का नाश इसलिए नहीं हुआ कि कि वह आलसी है वरन् इसलिए कि अन्य देशों में इस आलस्य के स्वर्ण-सिद्धांत का प्रचार नहीं हो पाया है। यदि उन देशों को भी भारत की यह शिक्षा-दीक्षा मिल गई होती, तो वे शय्या-जन्य नैसर्गिक सुख को त्याग यहां आने का कष्ट न उठाते। यदि बिना हाथ-पैर चलाए लेटे रहने में सुख मिल सकता है, तो कष्ट उठाने की आवश्यकता ही क्या? बेचारे अर्जुन ने ठीक ही कहा था कि युद्ध द्वारा रक्त-रंजित राज्य को प्राप्त करके मैं अश्रेय का भागी बनना नहीं चाहता। वे वास्तव में आराम से घर बैठना चाहते थे, किंतु वह भी कृष्णजी के बढ़ावे में आ गए और 'यशो लभस्व' के आगे उनकी कुछ भी न चल सकी। फिर फल क्या हुआ कि सारे वंश का नाश हो गया। इस युद्ध का कृष्ण भगवान को भी अच्छा फल मिल गया। उनका वंश भी पहले की लड़ाई में नष्ट हो गया।

महाभारत में कहा है कि-

'दु:खादुद्विजते सर्वः सुखं सर्वस्य चेप्सितम्'

अर्थात् दु:ख से सब लोग भागते हैं एवं सुख को सब लोग चाहते हैं। हम भी इसी स्वाभाविक नियम का पालन करते हैं। इन सिद्धांतों से तो आपको प्रकट हो गया होगा कि संसार में आलस्य कितना महत्व रखता है। इसमें संसार की हानि ही क्या? मैंने अपने सिद्धांतों के अनुकूल जीवन व्यतीत करने के लिए कई मार्ग सोचे, किंतु अभाग्य-वश वह पूर्णतया सफल न हुए, इसमें मेरा दोष नहीं है। इसमें तो संसार ही का दोष है; क्योंकि वह इन सिद्धांतों के लिए अभी परिपक्व नहीं है। अस्तु, वर्तमान अवस्था में बिना उद्योग के भी बहुत कुछ सुख मिल सकता है। उद्योग करके सुख प्राप्त किया, तो वह किस काम का? आलसी जीवन के लिए सबसे अच्छा स्थान तो शफाखाने की चारपाई है। एक बार मेरा विचार हुआ था कि किसी बहाने से युद्धक्षेत्र में पहुंच जाऊं तथा वहां पर थोड़ी-बहुत चोट खाकर शफाखाने के किसी पलंग में स्थान मिल जाए, किंतु लड़ाई के मैदान तक जाने का कष्ट कौन उठावे और बिना गए तो उन पलंगों का उपभोग करना इतना ही दुर्लभ है, जितना पापी के लिए स्वर्ग।

भाग्य-वश मुझे एक समय ऑपरेशन कराने की आवश्यकता पड़ गई, और थोड़े दिनों के लिए बिना युद्धक्षेत्र गए ही मेरा मनोरथ सिद्ध हो गया; किंतु पुण्य-क्षीण होने पर शफ़ाखाना छोड़ना पड़ा। मैं बहुत चाहता था कि मुझे जल्दी आराम न हो, किंतु डॉक्टर लोग मानने वाले जीव थोड़े ही हैं; अतिशीघ्र आराम कराके मुझे विदा कर दिया, मानो मेरे आराम से स्पर्धा होती थी। तब से फिर ऐसे सुअवसर की बाट जोह रहा हूं कि मुझे वहीं पलंग प्राप्त हो, जहां पर कि मल-मूत्र त्याग करने के लिए भी स्थान छोड़ने का कष्ट न उठाना पड़े। खैर, अब भी जहां तक होता है, मैं शय्या की सेवा से अपने को विमुख नहीं रखता। मेरा सब कारबार, भोजन एवं कसरत भी उसी सुख-निधान पलंग पर हो जाती है। कभी-कभी नहाने-धोने के लिए उससे वियोग होता है, तो उसको एक आवश्यक बुराई समझकर जैसे-तैसे स्वीकार कर लेता हूं। धन्य हैं तिब्बत के लोग, जिन्हें नहाने का कष्ट नहीं उठाना पड़ता। ईश्वर ने न जाने मेरा जन्म वहां क्यों नहीं दिया? तिब्बत का प्राचीन नाम त्रिविष्टप था। शायद इसी सुख के कारण वही बैकुंठ कहलाता है। बैकुंठ को लोग क्यों चाहते हैं, क्योंकि वहां आलस्य-धर्म का पूर्णतया पालन हो सकता है। वहां किसी बात का कष्ट ही नहीं उठाना पड़ता।

कामधेनु और कल्पवृक्ष को ईश्वर ने हमारे ही निमित्त निर्माण किया है। आजकल कलियुग में और भी सुभीता हो गया है। अब स्वर्ग तक कष्ट करने की भी आवश्यकता नहीं। कल्पवृक्ष बिजली के बटन के रूप में महीतल पर अवतरित हो गया है। बटन दबाइए पंखा चलने लगा, झाड़ू भी लग जावेगा, यहां तक कि पका-पकाया भोजन भी तैयार होकर हाजिर हो जावेगा। बिना परिश्रम के चौथी-पांचवीं मंजिल पर लिफ्ट द्वारा पहुंच जाते हैं। यह सब आलस्य की ही आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए संसार में उन्नति का क्रम चला है। और उन्नति में गौरव मानने वाले लोगों को हम आलसियों का अनुगृहीत होना चाहिए।

उपर्युक्त व्यवस्था से प्रकट हो गया कि आलस्य का इस संसार में इतना महत्व है। अब मैं आप महानुभावों के शिक्षार्थ एक आदर्श आलस्याचार्य का वर्णन कर अपने वक्तव्य को समाप्त करूंगा। क्योंकि मैं समझता हूं कि आप लोगों की पीठें शय्या के लिए बहुत ही उत्सुक हो रही होंगी।

कहा जाता है कि एक बड़े भारी आलसी थे। वह जहां तक होता था, हाथ क्या अपनी उंगली को भी कष्ट नहीं देना चाहते थे। उनके मित्र वर्ग ने उनसे तंग आकर सोचा कि इनको जीवित ही कब्र की शांतिमयी निद्रा का सुख प्राप्त करा दें। इस इरादे से वह उनको चारपाई पर रख ले चले। रास्ते में एक धनाढ्य महिला मिली। उसने जब यह शव-सा जाता हुआ मनुष्य देखा, तो उसका कुतूहल बहुत बढ़ा और उसने शय्या-वाहकों से सब वृत्तांत पूछा। उस दयामयी स्त्री ने हमारे चरित्र नायक से कहा कि आप मेरे यहां चलने की कृपा कीजिए। मैं आपको बिना कष्ट के ही भोजनादि से संतुष्ट करती रहूंगी। हमारे आलस्याचार्य ने पूछा कि आप मुझे भोजन में क्या-क्या देवेंगी? उस महिला ने बहुत-से पदार्थों का नाम लिया, उनमें उबले हुए आलू भी थे। इस पर उन्होंने कहा कि आलुओं को छीलेगा कौन? (लंच में कभी-कभी बिना छिले ही आलू देते हैं।) इस पर उस स्त्री को बहुत झुंझलाहट आई। हमारे आलस्याचार्य ने कहा कि मैं तो पहले ही से जानता था कि आप मेरी सहायता न कर सकेंगी और आपने वृथा मेरा समय नष्ट किया, नहीं तो मैं अभी तक आटर्यन आनंद-भवन में प्रवेश कर चुका होता। इतना कहकर उन्होंने शय्या-वाहकों को आगे चलने की आज्ञा दी।

इस आदर्श को मूर्खता न समझिए। वेदांत का मोक्ष और बौद्ध-निर्वाण इससे भिन्न नहीं है। भेद केवल इतना ही है कि इस प्रकार के जीवन को दार्शनिक रूप नहीं दिया गया है। इसलिए आप लोग जो इस सभा के सदस्य हैं, मेरे सिद्धांतों से सहमत हो निम्नलिखित प्रस्तावों को स्वीकार करें-

यह सभा प्रस्ताव करती है कि भारत-सरकार के कानून-विभाग से यह प्रार्थना की जावे कि ताजीरात-हिंद में एक धारा बढ़ाकर दिन-रात में दस घंटों से कम सोना दंडनीय बनाया जावे, क्योंकि कम सोने वाला मनुष्य आत्म-हत्या का दोषी होता है।

यह सभा प्रस्ताव करती है कि जो लोग ताश खेलना नहीं जानते हैं अथवा जो लोग तंबाकू न पीते हों, उन लोगों पर आमदनी के 5/- रुपए प्रतिशत के हिसाब से कर लगाने की प्रार्थना की जावे। इससे सरकार की आमदनी बढ़ेगी। इसके सिवा लोगों को ठलुआ-पंथी से अरुचि न होगी।

यह सभा प्रस्ताव करती है कि जो लोग इस सभा में रुपया-पैसा कमाने या और कोई उपयोगी बात जिसकी कीमत आने-पाइयों में हो सकती है, कहेंगे, वे इस सभा से बहिष्कृत कर दिए जावेंगे।

यह सभा प्रस्ताव करती है कि अमेरिका और इंग्लैंड की मोटर-कंपनियों से निवेदन किया जावे कि भविष्य में जो मोटरें बनवाई जावें वे ऐसी हों कि उनमें पैर पसारकर लेटे हुए सफर कर सकें। इसके अतिरिक्त ऐसी छोटी-छोटी मोटर-मशीनें तैयार करवाई जावें कि वे हमारी चारपाइयों में लगाई जा सकें और बटन दबाने से हमारी चारपाई एक स्थान से दूसरे स्थान तक जा सके। पहले लोगों की कल्पना शक्ति अच्छी थी। वे वायुयान को उड़नखटोला कहते थे। खटिया नहीं, तो खटोला अवश्य ही था। उड़नखटोला के स्थान में मोटर-पलंगों की आयोजन संसार की उन्नति के लिए परमावश्यक है।

यह सभा प्रस्ताव करती है कि सरकार से यह प्रार्थना की जावे कि संसार में सबसे बड़े शांति-स्थापनकर्ता को जो नोबल प्राइज मिलती है, वह सबसे बड़े आलसी को दिया जावे क्योंकि आलसियों के बराबर संसार में दूसरा कोई भी शांति-स्थापनकर्ता हो ही नहीं सकता। यदि वह इनाम काम करने वाले शक्तिशाली पुरुष को दिया जावेगा, तो वह कैसर की भांति संसार में युद्ध की ज्वाला को प्रचंड कर पुरस्कार-दाता की आत्मा को दुःख देगा।

बाबू गुलाबराय

एडवांस्ड इमेजिंग केन्द्र

इस आलेख को लिखने के लिए मेरे मन में बहुत दिनों से विचार चल रहा था परन्तु अन्य व्यवस्तताओं के कारण कभी कुछ लिख पाने का समय नहीं मिल पा रहा था। फिर जब अंतस पत्रिका को पढ़ने का अवसर मिला तो मन में विचार आया कि क्यों न अपने इमेजिंग सेंटर का कैम्पस समुदाय को अंतस पत्रिका के माध्यम से परिचय कराया जाये।

आईआईटी कानपुर द्वारा एडवांस्ड इमेजिंग सेंटर की स्थापना तीन वर्ष पूर्व की गयी थी। इस केन्द्र में अत्याधुनिक इलेक्ट्रोन माईक्रोस्कोप (सूक्ष्मदर्शी) की स्थापना की गई है। इमेजिंग सेंटर छात्रों, संकाय और शोधकर्ताओं के लिए इमेजिंग, अध्यापन और अनुसंधान में सेवायें प्रदान करता है। यह एक बहुप्रयोक्ता एवं बहु अनुशासनात्मक सुविधा है। इस केन्द्र की यह विशेषता है कि यह विश्वस्तर के सबसे अधिक परिष्कृत उपकरणों में से एक है जो सैम्पल तैयार करने के साथ-साथ फैब्रिकेशन एवं कैरेक्टराइजेशन करके पदार्थ के माइक्रो एवं नैनो स्तर पर लक्षण के वर्णन की क्षमता भी रखता है। नैनो विज्ञान की इस क्षेत्र में यह महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

हाई रेजोल्यूशन इलेक्ट्रॉन माइकोस्कोप 300 केवी एवं टेकनाई 120 केवी दो ऐसे इलेक्ट्रॉन माइस्कोप हैं जो विभिन्न क्षमताओं से युक्त हैं। इसका प्वाइन्ट रेजोल्यूशन अधिकतम 0.24 नेनो मी. तक है जो अल्ट्रा हाई रेजोल्यूशन में किसी पदार्थ को नौ लाख साठ हजार गुना बड़ा करके दिखा सकता है। इसकी अतिरिक्त विशेषता यह है कि इसके इलेक्ट्रॉन वितरण सुपर एक्स एस डी डी डिटेक्टर का उपयोग करके फास्ट ईडीएस विश्लेशक 3 डी टोमोग्राफी इत्यादि भी किये जा सकते हैं।

इमेजिंग केन्द्र की एक विशेषता मैं और बताना चाहूँगा कि सैम्पल तैयार करने के लिए यहाँ एक लैब भी है जो विशेष उपकरणों से सुसज्जित है तथा उसमें अल्ट्रामाइक्रोटोम वीट्रोवोट जैसे अत्याधुनिक उपकरण उपलब्ध हैं। अल्ट्रामाइक्रोटोम सैम्पल के बेहद पतली स्लाइस का सेक्शन काटने में प्रयुक्त किया जाता है। किन्तु यह शोधकर्ता पर निर्भर करता है कि उसके सैम्पल को कितना मोटा या पतला सेक्शन काटना है। इस सेक्शन का प्रयोग बाद में महीन कार्बन या निकल ग्रीड पर लगाकर इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप में इमेजिंग हेतु प्रयोग किया जाता है। हॉलाकि यह एक विशेष प्रकिया है जिसे करने और सीखने में विशेष दक्षता की आवश्यकता होती है।

इमेजिंग केन्द्र आईआईटी कानपुर संस्थान के शोध छात्रों तथा एम. टेक. पाठ्यक्रम के छात्रों की आवश्यकताओं के साथ-साथ अन्य आईआईटी जैसे दिल्ली, पटना इंदौर के छात्रों की जरूरतों को पूरा कर रही है। इसे इमेजिंग

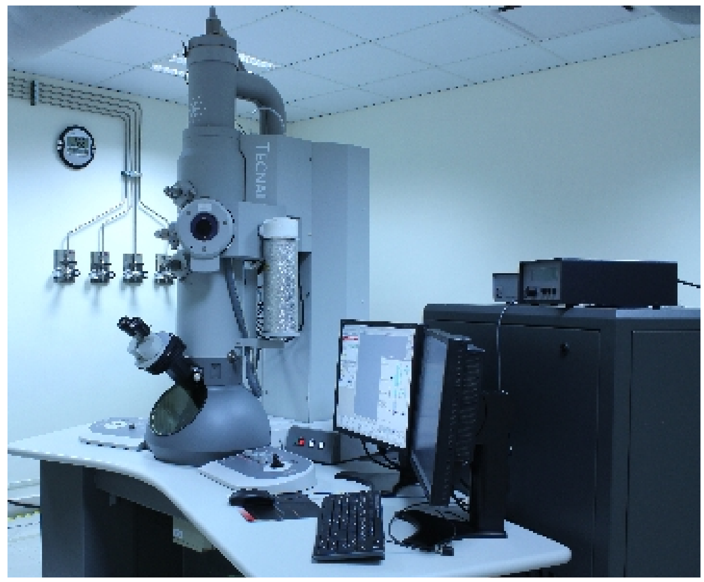

केन्द्र का विस्तार कह सकते हैं क्योकि पूरे उत्तर भारत में यह केवल आईआईटी कानपुर में ही उपलब्ध है जो स्वयं से परे अन्य शैक्षिक संस्थानों को भी सेवायें उपलब्ध करा रहा है।

हर्ष का विषय है कि इमेजिंग केन्द्र अपने संयोजक प्रोफेसर संदीप वर्मा के श्रेष्ठ मार्ग दर्शन में सुचारू रूप से कार्य कर रहा है जिसके लिए हम उनके आभारी हैं। मैं संस्थान के वरिष्ठ अधिकारियों को अपना हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ कि मुझे इतने महत्वपूर्ण केन्द्र के कार्य की जिम्मेदारी सौंपी गई है। मैंने बेहद कम शब्दों में केन्द्र का यह संक्षिप्त परिचय दिया है किन्तु यदि आपको इसकी भवन निर्माण कला तथा आधुनिक उपकरणों को देखने का अवसर मिले तो आप निश्चित रूप से गौरवान्वित अनुभव करेंगे।

जयन्त विश्वास
अधीक्षक, एडवांस्ड इमेजिंग सेन्टर
भा.प्रौ.सं.कानपुर

50वाँ दीक्षान्त समारोह 2017

संस्थान में 15 एवं 16 जून, 2017 को 50वें दीक्षान्त समारोह के अवसर पर पूर्व स्नातक (यू जी) पाठ्यक्रमों के कुल 948 विद्यार्थियों, परा-स्नातक के कुल 436 विद्यार्थियों एवं विद्या-वाचस्पति (पीएच.डी.) के 160 विद्यार्थियों को उपाधि प्रदान की गई।

बदलता भारत : एक दृष्टि

इस बात से सभी सहमत हैं कि भारत बदल रहा है। लेकिन यह भारत क्या है और यह बदलाव क्या है? क्या भारत कोई खरबूजा है, या गिरगिट है जो रंग बदल रहा है? भारत न एक वस्तु है, न एक समुदाय, न एक चित्र, न भूगोल, न एक दर्शन। मेरे लिए भारत एक जटिल, गतिशील इकाई है। स्वाभाविक है कि दयानन्द ने इसे वेदों में देखा, तो नेहरू ने इसे यहाँ की जनता में, टैगोर ने अंतर्राष्ट्रीय मानवतावाद में, गांधी ने सत्य में और श्री अरविंद ने अतिचेतना में। सबके भारत अलग-अलग हैं। और फिर बदलाव किस दिशा में है? क्या सम्पूर्ण भारत बदल रहा है? और यदि हाँ तो क्या भारत के सभी लोग एक ही प्रकार से बदल रहे हैं? भारत के बदलाव के प्रमुख स्त्रोत क्या हैं? इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं है या सबके अपने-अपने उत्तर हैं। मुझे लगता है कि हम पूरे भारत के बदलाव को एक साथ नहीं देख सकते। हाँ हम उसके भिन्न-भिन्न हिस्से करके देख सकते हैं। जैसे शिक्षा में, स्वास्थ्य में, राजनीति में, धर्म में आदि।

शिक्षा में क्या हो रहा है? मैंने जिस भारत में जन्म लिया था उसमें पढ़ाई-लिखाई की सुविधाएं कम थीं। किसी-किसी बड़े गाँव में जिला परिषद के स्कूल थे और शहरों में नगर पालिका के स्कूल थे, एक राजकीय उच्चतर-माध्यमिक कॉलेज और एक-आध डिग्री कॉलेज जिनमें सीमित विषयों में ही पढ़ाई होती थी। नगर पालिका के एक ही स्कूल में गड़रिये का लड़का सरबजीत, हैड मास्टर का लड़का अरविंद, बुखारे का आबिद, मनिहार का अशोक और भंगी का निर्मल, सभी साथ-साथ पढ़ते थे। थोड़ी सी किताबें थीं। अरविंद को स्याही पीने की आदत थी और निर्मल बहुत अच्छा गाना गाता था। पहाड़े पढ़ने के बाद सबको दूध का पाउडर मिलता था और छुट्टी हो जाती थी। आज स्कूलों की बाढ़ सी आ गई है। सरकारी हैं, प्राइवेट हैं, सभी स्तरों के हैं, अलग अलग वर्गों के हैं। प्रबंध-शिक्षा के, इंजीनियरिंग के, मेडिकल के, कानून के। कुछ तो ऐसे हैं कि कागजों पर एक शहर में हैं किन्तु चलते कहीं और हैं। कहीं-कहीं केवल पैसे देकर काम चल जाता है, कॉलेज जाना नहीं पड़ता। डिग्री घर पर आ जाती है। दुःख की बात यह है कि शिक्षा कहीं नहीं है। हम लोग जब पढ़ते थे तो ऐसा महसूस करते थे कि शिक्षा बहुत उपयोगी चीज है, शिक्षा से मान है, सम्मान है, रोजगार है, ज्ञान है, नैतिक उत्थान है, समाज की प्रगति की सम्भावनाएँ हैं, बुद्धि है, बुद्धिजीवी हैं और साहित्य एवं कला है। आज के कितने बच्चे ऐसा महसूस करते हैं? आज अभिभावक बच्चे को केवल इसलिए कॉलेज भेजता है कि बड़ा होकर एक अच्छा "पैकेज" लेकर आए। किन्तु बच्चा जानता है कि यह सब भी ईश्वर की ही कृपा पर निर्भर है। उद्योगों में छटनी हो रही है, कॉलेज बंद हो रहे हैं, कोई आश्वस्त नहीं है, केवल निर्धनता के गर्त में पड़ा व्यक्ति सोचता है कि उस पर चार पैसे होते तो वह भी अपने बच्चे को पढ़ा लेता और उसका बच्चा भी कुछ बन जाता।

स्वास्थ्य में क्या है? मेरे पिताजी के बचपन में महामारियाँ होती थीं। प्लेग फैली, बाढ़ आ गई, आग लग गई, गाँव के गाँव तबाह। माँ-बाप, दादा-दादी, भाई-बहिन कोई नहीं बचा। चार-पाँच दिन में सब समाप्त। जो बच गए वो सौ-सौ वर्ष जी गए। अस्सी साल में भी छै फिट के गबरू जवान। मेरे पिताजी जब काम के लिए खेत में जाते थे तो कई बार भेड़िये से बचने के लिए कुऐ के अंदर लटक जाते थे और भेड़िये के चले जाने की प्रतीक्षा करते थे। आज प्रगति हो गई है। औसत उम्र बढ़ गई है – 19 से बढ़ कर 69। किन्तु हर व्यक्ति कम से कम पाँच-छः वर्ष हॉस्पिटल में पड़ा होता है। अगर पैसे वाला है तो दूर के किसी प्रांत की सुपर-स्पेसलिटी में भर्ती है। मरने से पूर्व अपनी तो सारी कमाई खर्च हुई ही और परिवार को कर्जे में छोड़ गया। यह सब हमारे चारों ओर हो रहा है। आज औसत उम्र बढ़ गई किन्तु घर में किसी न किसी की रक्षा के लिए महामृत्युंजय हो रहा है। अपने मौसाजी का एक शेर याद है:"मुसीबत, और लंबी जिंदगानी, बुजुर्गों की दुआ ने मार डाला।" लोग जी अधिक रहे हैं, पर बीमारियाँ बढ़ रही हैं, समस्याएँ बढ़ रही हैं।

भारत बदल रहा है। जब मैं छोटा था मेरे अधिकांश दोस्त प्रगतिशील थे और अगर कोई दुकानदार या पंजाबी-सिंधी टाइप व्यक्ति उनके किसी मुस्लिम दोस्त के परिवार के बारे में कुछ टिप्पणी करता था कि जैसे "वो लोग बहुत तास्सुवी हैं" तो उन्हें अच्छा नहीं लगता था। वो मुझसे कहते कि अरुण देखो जावेद कितना भला है और उसके अब्बा ने इस शहर के लिए कितना कुछ किया है। उसके बाबाजी गांधीजी के अनन्य भक्त थे। आज वे सब "ओल्ड जी आई सी..." में व्हाट्सैप पर दूसरों के लिए कितना जहर उगलते हैं मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। भारत बदल रहा है और उसकी राजनीति भी। सभी बदल गए हैं या पगला गए हैं।

धर्म, यदि रोग-शोक से मुक्ति के लिए या अपनी शान दिखाने के लिए नहीं है तो घृणा का कारण बन गया है, केवल दो ही बातें बची हैं। धर्म का उदात्त स्वरूप बदलते भारत की भेंट चढ़ गया।

फल-सब्जियाँ बदल गईं। पेट का दर्द ठीक करने वाली मूंग की दाल और बुखार में दिया जाने वाला पुदीने का पानी कैंसर का रिस्क पैदा कर रहे हैं। पक्की ईंटों के मकान जिनमें AC फिट हैं, आम आदमी के लिए भट्टी बन गए

हैं। कुछ लोग ऑफिस में AC में बैठ कर कोडिंग कर रहे हैं तो कुछ लोग अभी भी हाथ का रिक्शा खींच रहे हैं, वह भी साम्यवादियों के शहर कोलकाता में।

कहीं मैं निराशावादी तो नहीं हूँ? बदलाव के धनात्मक पक्ष भी हैं जैसे आय बढ़ी है, नगर बढ़े हैं, infectious diseases कम हुई हैं। धर्म का बोलबाला है। मंदिर-मस्जिद बन रहे हैं, तिलक और बुर्के बढ़ रहे हैं तो लगता है कि आस्तिकता भी बढ़ रही है। लोग हाथों में कलावा बांध कर घूम रहे हैं। पर क्या नैतिकता बढ़ रही है? मॉल हैं, पिज्जा है, आइस्क्रीम है, हर बात की अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं हैं, गरीबों के लिए सरकारें हैं, एन जी ओ हैं, संचार के जबरदस्त साधन हैं, समाचार पत्र खूब पढे जाते हैं, भगवान की जितनी क्षमताओं वाले डॉक्टर हैं, देश में ही कितने अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त विद्वान हैं। विकास हो रहा है। विकास की कल्पनातीत संभावनाएँ हैं। अंतर्राष्ट्रीय पूंजी भी उपलब्ध है और स्वदेशी के पक्ष में सहस्त्रों, महात्मा गाँधियों से अधिक प्रभावी बाबा लोग हैं। शुद्ध शहद, हल्दी, बासमती सब शुद्ध मिल रहा है।

तो फिर क्या बदलने का अर्थ अंतर्विरोध है? पता नहीं, किन्तु कुछ तो बदल रहा है। बदलाव सबके सामने है। यह समझना तो और भी मुश्किल है कि बदलाव हो क्यों रहा है? शायद जो लोग लाभ कमा रहे हैं वही इस बदलाव के प्रमुख कारण हों या इसका कारण वैश्विक पूंजी हो, शायद वक्त ही इसका कारण हो, या हम सभी इसका कारण हैं? पर भारत बदल तो जरूर रहा है।

गांधीजी कहते थे भारत बदलना चाहिए। भारत बदलेगा तो दुनिया बदलेगी। पश्चिमी सभ्यता से ग्रस्त मनुष्य को जब कहीं रास्ता नहीं दिख रहा है तो भारत दुनिया को रास्ता दिखायेगा। हो उल्टा रहा है। भारत दुनिया के जैसा विकास चाह रहा है, सभी बड़े-बड़े लोग, नेता, विद्वान, व्यापारी, धर्मगुरु यही चाह रहे हैं। तो क्या होगा उस वैदिक कल्पना का कि सबका भला हो, सत्य स्थापित हो, कोई दुखी न हो, कोई बीमार न हो, सबका कल्याण हो? मेरी पत्नी कहती है हमें आशावादी रहना चाहिए। कल से अब सब अच्छा होगा। भगवान मेरी पत्नी की बात सही निकले और मैं हमेशा की तरह फिर हार जाऊँ।

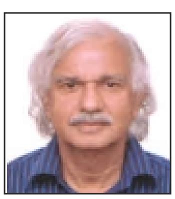

प्रो. अरुण कुमार शर्मा
मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग
भा.प्रौ.सं.कानपुर

टूटा तार

जाने कैसे टूट गया कब वीणा का इक तार,
सूना-सूना लगता है अब गीतों का संसार।

दिनभर थककर सोया था मैं,
कुछ सपनों में खोया था मैं,
बाँहों में थी घिरी हुई सी अपनी प्यारी वीणा
ऐसे क्षण में आँख बचाकर
तोड़ गया कोई नज़र चुराकर,

था मैं अकिंचन पहले से ही, गया मुझे कर दीन।
या मैंने ही अनजाने में।।
तन्द्रा ही में बजाने में
आवेशों में कर दी उसकी जीवन-रेखा क्षीण?
इस वीणा में हुआ नहीं फिर मधुरस का संचार
टूट गया है मनवीणा का वह धैवत का तार।

कारीगर तो लाख मिले हैं, पर टूटा जो बन न सका
वीण हजारों मिल जाते हैं, पर वह समाँ फिर ठन न सका।
किस धातु का तार बना था जौहरी को मालूम नहीं
तार बने हैं बहुतेरे फिर, पर स्वर वैसा मासूम नहीं।

अब भी मेरे गीत सभा में वैसे ही गाए जाते हैं,
शुभ अवसर पर प्रियजन को वे अब भी सुनाए जाते हैं,
किन्तु राग जो प्रिय है मुझको उसका होता न सन्धान
छेड़ नहीं अब सकता हूँ मैं वह धैवत का तान।

औरों की बीनों ने जब-जब मेरा प्रिय सुर गाया है,
मुझे पागल को तब-तब उसने सोते से भी जगाया है।
यादों की हुई है बरसात,
लौटे वे खोए से जज्बात,
बीते की तस्वीर ने मन को रीती राहों में भुलाया है।
भर आया है तब-तब दिल में यादों का अम्बार
भुला न सकता है मन मेरा वह धैवत का तार।

नीलकंठ

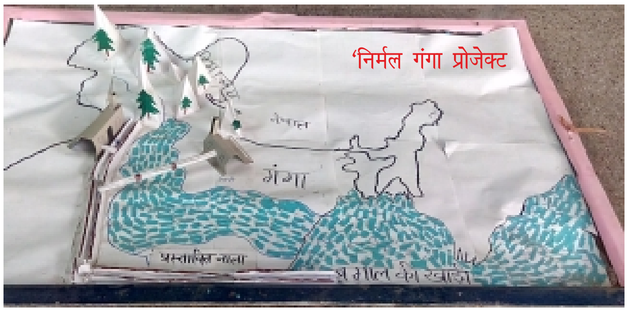

बदलते भारत की आहट

ऑपरच्युनिटी स्कूल-निर्धन बच्चों का सौभाग्य। ओपन हाउस का दिन। सप्तम कक्षा, निहाल, साहिल, शीतल और आरती (शायद यही तीन चार बच्चे तो थे जिन्होने 'निर्मल गंगा प्रोजेक्ट' का माडल बनाया था। एक बड़े से रद्दी बोर्ड पर। कितनी सरल व्यवस्था का कितना सहज निरूपण किन्तु भारत की सम्पूर्ण राजनैतिक व्यवस्था को झिंझोड़ कर रख देने वाली बात ! कितने बेबाक ढंग से भ्रष्टाचार के अथाह समन्दर का खुलासा (और आश्चर्यचकित कर देने वाली अभिनव सोच !) ये आई. आई. टी. परिसर के बच्चे हैं जिनमें कुछ बात तो है । इनकी सोच और समझ में तो व्यवस्थित, सुगठित, भविष्य का अभिनव भारत झलकता है!

प्रतिरूपण था क्या ? इन्होंने बड़े से बोर्ड पर सम्पूर्ण उत्तर भारत का दृष्यांकन किया था। सफेद कागज की अनेकों शंकु जैसी संरचनाओ से हिमालय पर्वत श्रृंगार, दर्शाया गया था। हरे कागजों के शंकुल वृक्ष सी संरचनाएं, काटकर पर्वतों से चिपकाई गईं थीं। पर्वतों पर वन सम्पदा का स्वाभाविक निरूपण था यह। इसके पश्चात उत्तर भारत में यत्र-तत्र चिमनीदार डिब्बों को चिपकाया गया था जिन पर प्रतीकात्मक ढंग से कुछ कारखानों, टेनरियों के नामों को अंकित किया गया था। इन सब के बीच से हिमाद्रि उद्भूत माँ गंगा का अपनी देवधरा पर बंगाल की खाड़ी तक लोमहर्षक विचरण दर्शाया गया था। लोमहर्षक इसलिए क्योंकि इन कारखानों और टेनरियों से निकलने वाले नालों के द्वारा प्रदूषकों को कहीं पर माँ गंगा में गिरते दिखाया गया था तो कुछ कारखानों और टेनरियों के नालों को गंगा के समान्तर बंगाल की खाड़ी तक बहने वाले विशाल नाले से जोड़ा गया था। बस यही तो थी अभिनव सोच, माँ गंगा के समान्तर एक विशाल नाले का निर्माण।

संस्थान के 1967 समुदाय के सफल एवं ख्याति प्राप्त पूर्व छात्रों का शुभागमन हुआ। संगी थे संस्थान के विशिष्ट प्रबुद्धजन। विभिन्न कक्षाओं से होते हुए सप्तम कक्षा में प्रविष्ट हुए। कक्ष में प्रवेश करते ही सबको लगा जैसे उन्होंने कौतूहल की दुनिया में प्रवेश किया। दर्जनों बच्चे अपनी गणित की पहेलियों के साथ तैयार थे। कोई गणितीय विधि से किसी की जन्म तिथि बता रहा था तो कोई जोड़ के क्विक मेथड के साथ तैयार था। कोई तीलियों से बने अंकों की पहेलियाँ लेकर बैठा था तो कोई ऐसा भी था जो आपकी दिनचर्या का पसंदीदा समय भी बता सकता था। सबको तो जैसे मनबहलाव का साधन ही मिल गया। कई अनिवासी भारतीय इन बच्चों की मनोरंजक पहेलियों में जैसे उलझकर ही रह गए थे (भले बच्चों का मन रखने के लिए ही सही) क्योंकि सबसे ज्यादा वक्त इन सबने सप्तम कक्षा में ही व्यतीत किया। एक महोदय ने तो माचिस की तीलियों वाली पहेली में जानबूझकर खूब वक्त दिया। लोगों को कार्ड्स वाला मेमोरी गेम भी खूब भाया। अंत में तीन घरों में बिना क्रास किए गैस बत्ती और पानी की आपूर्ति करने वाली असंभव पहेली में सब इतना उलझे कि असंभव को सम्भव ही न कर सके। फलतः सभी एन.आर.आई. और प्रबुद्धजनों ने पहेली को बाद में हल करने के लिए एक-एक छाया प्रति भी माँग ली। कला, साहित्य और भूगोल के माडलों से सुसज्जित कक्ष से मेहमान गमन को उद्यत ही थे कि नजर "निर्मल गंगा प्रोजेक्ट" पर पड़ी। वे आकृष्ट हुए बिना न रह सके।

दीवार पर कागज की पट्टिका पर धनुषाकार ढंग से लिखा हुआ था-निर्मल गंगा प्रोजेक्ट और ए-4 साइज के कागजों को जोड़कर स्केच पेनों से लिखा गया था-'हजारों करोड़ों रुपये लगाकर माँ गंगा की आरती उतारने से गंगा स्वच्छ होने से तो रही। गंगा को यदि निर्मल गंगा बनाना है तो माँ गंगा को निर्मल ही रखना होगा। माँ गंगा के समान्तर एक विशाल नाले का निर्माण करना होगा और इस नाले के प्रयोगकर्त्ताओं को नाला टैक्स अनिवार्यतः देय होगा।' और इस कटाक्षपूर्ण लेख के नीचे सात दिनों के भीतर माँ गंगा को स्वच्छ कर दिखाने वाला चुनौतीपूर्ण मॉडल रखा गया था।

एक बारगी ही सबको यह कौतूहलपूर्ण लगा। दीर्घावधि से जिसका सटीक हल आज तक की किसी सरकार के पास न था, वह इन बच्चों ने अपने मॉडल से प्रदर्शित किया था। विचार विमन्थन प्रारम्भ हो गया और बच्चों की समझ को समझकर समझाने का क्रम शुरू हुआ।

"बच्चों, आपने यह जो मॉडल दिया है, अंदाज लगा सकते हैं कि यह कितना कॉस्टली है ?"

उत्तर मिला-सर, हम समझ सकते हैं कि यह बहुत मंहगा है लेकिन शायद उतना मंहगा नहीं जितना गंगा सफाई के नाम पर सरकारी तंत्र द्वारा अब तक उड़ाया जा चुका है।

"ऐसा तुमसे किसने कहा ?"

उत्तर मिला-हर कोई जानता है। टी.वी. में दिखाया जाता है। अखबारों में आता रहता है। गंगा किनारे वन सम्पदा को नष्ट करके विश्वस्तरीय महंतों के सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करके पूजा पाठ का ढोंग करने से थोड़े न गंगा साफ हो सकती है? आप ही बताइये ?

"ठीक है ढोंग करने से गंगा साफ न होगी लेकिन फिर भी यह बहुत मंहगा है भाई। हिमालय से लेकर बे ऑफ बंगाल तक नाले का निर्माण बहुत बड़ी धनराशि चाहिए।"

उत्तर मिला-सर, देश भर में कितने हाईवेज हैं, कितनी सड़कें हैं? इनका

खर्च रोड टैक्स से आता है कि नहीं? फिर इसमें क्या दिक्कत है कि हर प्रयोगकर्ता इस नाले के लिए नाला टैक्स अदा करे ?

"हूँ । है तो बढ़िया बात। लेकिन बरखुरदार इसमें क्या दिक्कत है कि हम इतना अधिक खर्च करने के बजाय वाटर ट्रीटमेंट करके नालों को गंगा में गिरने दें ?''

उत्तर मिला-सर, क्या ट्रीटमेंट के पश्चात जल शुद्ध हो जाता है ? क्या उसे पिया जा सकता है ?

"हाँ, यह तो ट्रीटमेन्ट पर निर्भर करता है कि किस स्तर का हुआ है?"

उत्तर मिला-सर, हमारा सोचना है कि ट्रीटमेन्ट मेथड से गंगा को स्वच्छ नहीं किया जा सकता। कम से कम इस देश में तो नहीं। आप दिल से बोले कि माँ गंगा को निर्मल गंगा में परिवर्तित करने में कितने वर्ष लग जाएँगे ?

"यह कहना तो मुश्किल है। भ्रष्टाचार बहुत है। ईमानदारी की कमी है इसलिए सभी चीजों पर नियन्त्रण में वक्त लग सकता है।"

"लेकिन सर, हमारे मॉडल का दावा है कि मात्र एक सप्ताह में गंगा स्वच्छ गंगा में परिवर्तित हो सकती है।" शीतल ने कहा। इस बालिका की आँखों में उस समय किसी दुर्गम किले को फतह करने जैसी चमक थी ।

अब एक महोदय ने पूछा, "अच्छा यह बताइये आपके मॉडल के अनुसार गंगा के पैरेलल चलने वाले इस नाले को सीधा बे ऑफ बंगाल में गिराया जाना है। इसका नतीजा क्या होगा जानते हैं ? बे ऑफ बंगाल की ओर रहने वाले लाखों लोगों का जीवन कितना प्रभावित होगा ? उधर के लोगों की जीविका बे ऑफ बंगाल से ही चलती है। विशाल नाला गिरने से सारी मछलियाँ और जल-जीव मारे जाएंगे। तब बताइये, उनका क्या होगा ?"

"यह बात तो सही है सर! इसके लिए सर क्या यह नहीं हो सकता कि इस नाले में ही ट्रीटमेन्ट के बाद पानी छोड़ा जाए। जैसा गंगा मैया में छोड़ने की बात की जाती है ? "आरती ने अपनी समझ व्यक्त की।"

"हाँ, हो सकता है लेकिन-- यह महोदय सम्भवतः वाटर रिसोर्स डिपार्टमेन्ट से सम्बन्धित थे अपनी बात पूरी करते हुए बोले-"तुम्हारी जानकारी के लिए मैं बताना चाहूँगा कि गंगा में जो सीवेज छोड़ा जाता है वह जरूरी भी होता है। गंगा के जलजीव उसे खाते हैं।"

"खाते हैं !" समवेत स्वर में सब चौंक पड़े ।

कुछ क्षणों के लिए निस्तब्धता छा गई। कुछ सहसा ठठाकर हँस पड़े तो कुछ गहनान्तर में विस्मय समेटे मुस्कुरा उठे।

अब एक पूँजीपति एन.आर.आई. जिनका सम्भवतः कहीं कोई कारखाना या टेनरी चलती है, बताने लगे कि सभी कारखाने मालिक यदि ईमानदारी बरतें और एक वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट जरूर लगाएं और सॉलिड पार्टिकल्स एवं हानिकारक टॉक्सीकैन्ट्स को निष्पादन के पश्चात गंगा के प्रवाह में मिलाएँ तो इतनी बड़ी प्रॉब्लम नहीं होगी।

पुनः वही प्रश्न खड़ा हो जाता है कि इस देश के लोगों से कितनी ईमानदारी की गुंजाईश की जा सकती है? जिस देश के लोग दूध में कास्टिक सोडा, तेल के नाम पर ब्रान ऑयल, वनस्पति घी के नाम पर मोम और पशु चर्बी खाने के लिए बाध्य हों उस देश में भला ये टेनरी मालिक क्यों ट्रीटमेंट प्लान्ट सुचारू करने लगे? क्या इनके संचालन में अलग से डीजल-बिजली का खर्च नहीं आएगा? क्या उन्हें पागल कुत्ते ने काटा है जो वे ऐसा करेंगे?

अब समस्याओं के सही ढंग से निराकरण और बने हुए नियमों का अंशतः अनुपालन करवाने पर जोर देने की आवश्यकता है।

'सच में देश में भ्रष्टाचार एक बड़ी व्यापक समस्या है। इसका कोई हल नहीं है।'

"सर, जैसे हम लोग कोट को ड्राईक्लीन करवाते हैं वैसे क्या चमड़े के परिशोधन के लिए ड्राई प्रोसेस ईजाद नहीं की जा सकती? सुना है आई. आई.टी. में बहुत सी रिसर्च होती है। क्या यहाँ के काबिल लोग चमड़े के शुद्धिकरण के लिए ऐसी कोई खोज नहीं कर सकते जिसमें जल की कहीं पर भी आवश्यकता ही न हो ?" अनमोल एक साँस में कहता चला गया था।

"बहुत बड़ी बात है बेटा! लेकिन तुम लोग अच्छा सोचते हो। बड़े होकर तुम लोग अच्छा करना भी।" और ऐसा कहकर, थोड़ा हँसकर पीठ थपथपाकर सभी विशिष्ट जन कूच कर गए।

विशिष्ट जन सप्तम कक्षा से कूच तो कर गए किन्तु खाली हाथ होकर भी खाली हाथ नहीं गए। गंगा मैया के शुद्धिकरण का एकमात्र और सटीक हल ही नहीं, चमड़े के परिशोधन की नई विधियों को ईजाद करने के भारी भरकम सवाल भी ढोकर ले गए जिसका सही जवाब वर्तमान में उनके पास नहीं था।

"मुझे भली भाँति स्मरण है, उस दिन महानुभावों के बीच किसी ने कहा था, 'इस मॉडल के विषय में होम मिनिस्टर को लिखा जाए। उन्हें अवगत कराया जाए फिर देखें वे क्या कहते हैं?' आज लगता है यह मात्र ठिठोली में कहा गया था।

संतोष कुमार गोड़िया
शिक्षक, ऑपरच्युनिटी स्कूल

प्रगति पर देश हमारा है

नभ की ऊँचाई नाप चुका,
मंगल पर परचम छाप चुका,
जग रहा अपार विचार किये,
जब प्रक्षेपित कुल सौ-चार किये,
मही पर वैभव पसारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

हर बच्चा शिक्षा पाया है,
साक्षरता सत को लाया है,
घर-घर आडम्बर दूर हुये,
सुख जीवन के अनुकूल हुए,
जन-जन की विचारधारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

अब निशा काल दिन होता है,
हर गात प्रभा में सोता है,
हर आलय विद्युत पूर्ण हुये,
सुदूर भी तम से दूर हुये,
गाँव-गाँव विधुतधारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

शस्य-उत्कर्ष माया है,
हक हलधर ने निज पाया है,
चहुँ ओर जलाशय-ताल हुये,
नित सूखे को ये काल हुये,
हर नहर में अमृतधारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

मनोरम दर्शन विरासत के,
नवीनतम, अतुल्य भारत के,
निरंतर पर्यटन प्रचार किये,
गण, याम निशा दो चार किये,
इतिहास हमारा प्यारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

हासिल नियंत्रण अब व्याधि पर,
कम सोते अब तन समाधि पर,
देशज विधियों का ख्याल किया,
प्रति-एक दिशा हर डाल किया,
हर उद्भव प्राण दुलारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

नभ, सीमा उच्च्व इमारत की,
नव रेल प्रणाली भारत की,
बढ़ रहा तरीका शोधन का,
उपयोग प्राकृतिक साधन का,
जन-जीवन नित्य सुधारा है,
प्रगति पर देश हमारा है।

धर्मेन्द्र पटेल
छात्र

क्यों अपने ही घर से निकलने को सकुचाती हो?

हो बसा सूर्य सा तेज जब स्वयं दुर्गा का तुझमें,
फिर क्यों अंधेरे रास्तों से डर जाती हो?

हो लिए सूर्य की लालिमा जब तुम अपने माथे पर
फिर क्यों अपने ही घर से निकलने को सकुचाती हो?

हो श्रृंगार किये जब आँखों में तुम..काली के क्रोध का काजल,
फिर क्यों किसी की निर्लज्ज आँखों से यूँही नग्न हो जाती हो?

क्योंकि लज्जा सिर्फ नारी का गुण, नहीं पुरुष का पुरुषार्थ, भी तय करती है,
हो लिए सूर्य की लालिमा जब तुम अपने माथे पर,
फिर क्यों अपने ही घर से निकलने को सकुचाती हो?

हो धारण किए जब तुम अडिग आत्मसम्मान का परिधान,
फिर क्यों आवारा हवा के झोंको में.. अपना दुपट्टा उड़ जाने देती हो?

हो लिए सूर्य की लालिमा जब तुम अपने माथे पर,
फिर क्यों अपने ही घर से निकलने को सकुचाती हो?

हो लिए जब माँ में सीता सा सतीत्व,
जब लांघे मर्यादा की सीमा कोई रावण.. फिर क्यों मूक बधिर रह जाती हो?

हो लिए सूर्य की लालिमा जब तुम अपने माथे पर,
फिर क्यों अपने ही घर से निकलने को सकुचाती हो?

अनूप
पूर्वछात्र

कविताएं

भारत बदल रहा है

देश बदल रहा है, लोग बदल रहे हैं,

प्रगति के पथ पर, सोच बदल रहे हैं।

अंतरिक्ष के क्षेत्र में, इसरो बढ़ रहा है।

हम बदल रहे हैं, गाँव बदल रहे हैं।

देश की दिशा देखो, अब बदल रही है।

स्वच्छता के लिए, सभी जागरूक हैं।

गैस आ रही है, धुआँ जा रहा है।

गाँव-गाँव देखो, टी वी दिख रहा है।

शिक्षा की अनोखी, अलख जल रही है।

सड़के बन रही हैं, पुल बन रहे हैं।

ओलम्पिक में देखो, बेटियां जा रही हैं।

खूब लड़ रही है, मेडल ला रही है।

भारत अब देखो, डिजिटल हो रहा है।

नगदी की जगह, कार्ड चल रहे हैं।

हर एक के हाथ में, मोबाइल दिख रहा है।

विश्व में देखो, भारत उठ रहा है।

तिरंगे की शान में, विश्व झुक रहा है।

सच देखो! आज तुम! कुछ तो बदल रहा है।

भारत बदल रहा है।

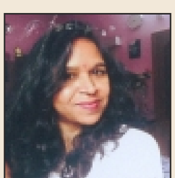

श्रीमती वंदना सिंह

भारत बढ़ रहा है

भारत बढ़ रहा है।
उम्मीदों के पंख लगाये,
सरपट दौड़ा जा रहा है।
पहले लालटेन की मद्धम रोशनी थी,
अब बिजली की चकाचौंध है।
पहले किताबें सहेजनी होती थीं,
अब बस फोल्डर सेव करते चलो।
पर कुछ है, जो खटकता है,
हम घरों में बल्ब जलाते हैं।
पर भूल जाते हैं।
"नर्मदा बचाओ आन्दोलन" जैसे अनगनित संघर्षों को,
हमने धरती की कोख से असीमित अन्न उपजाया,
पर जाने अनजाने जमीन बंजर करते गए।
हमने सड़कें बनायीं,
और पहाड़ों को कम करते गए।
अब रिश्ते वर्चुअल होते जा रहे हैं।
संवाद केवल ट्विटर, एफबी पर होते हैं।
अम्मा के चौके की महक कहीं खो गयी है।
हम सब दौड़े जा रहे हैं, अंतहीन दौड़ में,
निसंदेह भारत बदल रहा है।
पर क्या सच में भारत बेहतर हो रहा है ?

अजय कुमार
छात्र

ज़िंदगी

इस जाड़े की सुबह की ये धुंध आज अजीब से मौसम की दस्तक लेकर आयी है। मानो ....मैं अपनी रजाई में सिमटी एक टक खिड़की के बाहर निहारे जा रही थी। अपनी उम्र के 70 बरस पूरे कर लेने के बाद भी आज भी मुझमें मेरा बचपन कैद सा था, मन कर रहा था अपने शरीर पर पड़ी हर सिलवट को मिटा दूँ...बालों में आयी सफेदी को सुनहरे बालों में तब्दील कर दूँ। मन दोबारा एक अल्हड़ सी जिंदगी जीने को अकुला रहा था...मैं बेकरार थी अपने नन्हें से पोते के आने को लेकर। आज मेरा बेटा और बहू पूरे साल के बाद मुझे मिलने आ रहे थे...मैं बेकरार थी उनके लिए अपने हाथों से कुछ अच्छा पकाने के लिए ....मैं चाहती थी अपने पोते को दुलारने के लिए मगर असमर्थ थी, आखिर क्यों...? आज सुबह मेरी नौकरानी जब चाय लेकर मुझे जगाने आयी... तो मुझे बुलाती रही पर मैं बोल क्यों नहीं पा रही हूँ आज... ? क्यों, ऐसा क्या हो गया? मैं इस मौसम में अभी तक कभी अपने बिस्तर पर इतनी देर तक नहीं रही...। हमेशा सुबह पाँच बजते ही आँख खुल जाती। मैं बगीचे में पड़े झूले पर बैठी सात बजे तक गुनगुनाती और अपनी कविताओं को लिखती फिर आज मैं क्यों नहीं उठी?...मेरे लगाये गुलाब के पौधे आज मेरा इंतजार कर रहे होंगे... फिर क्यों मैं उन बच्चों जैसे अपने पौधों के पास नहीं जा पा रही? .....मैं कशमकश में अभी भी हूँ...मेरा बेटा गेट पर था। अपने आँसू पोछते हुए वो मेरे कमरे की तरफ बढ़ा, पर ये रो क्यों रहा है? शायद इतने दिनों बाद आया था इसलिए? मगर मैं उठ क्यों नहीं पा रही? मेरी आँखें तो खुली हैं। मैं बोलना चाहती हूँ। अपने बेटे को गले से लगाना चाह रही थी...मेरा पोता तोतली सी जुबान में दादी-दादी बुला रहा था। मैं उसको भी कुछ नहीं बोल पा रही थी...देखते देखते मेरा घर पड़ोसी, मेरे मित्र संबंधियों से घिर गया। अरे! मुझे क्यों उठा रहे हैं? मुझे क्या हुआ है? बेटा! अपनी माँ को क्यों जमीन में लिटा दिया? मुझे जमीन में लेटते ही ठंड लगने लगती है...अरे मेरी तस्वीर? आखिर क्यों ये सब क्या हो रहा है.... तभी एक सरसराती हुई किरण मेरे पास आयी। मुझे उठाने को कहा। मैंने बिना कुछ पूछे उठने की कोशिश की और मैं उठ गयी। शरीर बहुत हल्का लग रहा है...अरे मैं उतनी ही सुन्दर दिख रही हूँ जितना चाह रही थी...मुझे अब कोई मोह नहीं। यहाँ रहने के लिए अभी भी असमंजस था कि मेरे साथ क्या हो रहा है? वो किरण मुझे एक कोने में लेकर खड़ी हो गयी। मुझे इशारा किया अपने ही शरीर को देखने के लिए। मैंने देखा, मैं अचेत पड़ी थी। मेरा बेटा मेरी अंत्येष्टि की तैयारी कर रहा था। मैं थोड़ा विचलित हुई। मैं जाना चाह रही थी तभी उस किरण ने मुझे थाम लिया और मैं सब छोड़कर उसके साथ चली गयी...आज मेरी कुलबुलाहट से मेरी माँ बहुत खुश थी उसके गर्भ में मैं करवटें ले रहा था... पर मैं तो लड़की थी न... अरे मुझे कुछ याद क्यों नहीं ...अरे अब ये डॉक्टर क्यों है? सब पास आ हैं रहे हैं, मुझे गले लगा रहे हैं.. मेरी माँ को बधायी दे रहे हैं...मैं कहाँ हूँ...? मैं वो हूँ जो अपने बेटे और पोते को देखने को व्याकुल थी या ये जब मैं किसी का पोता हूँ.. किसी का बेटा...मैं आखिर कौन हूँ.क्या आपको पता है... ?

श्रीमती रत्ना पाल
कनिष्ठ अधीक्षक
लेखा अनुभाग

चिंता और चिता में फर्क

शिष्यों ने गुरु से पूछा- गुरुवर! शास्त्रों में चिंता न करने पर इतना जोर क्यों दिया गया है? चिंता मानवीय व्यक्तित्व के लिए इतनी घातक क्यों है? गुरु ने उत्तर दिया-चिंता और चिता में बिंदु मात्र का अंतर है। चिता तो मरे प्राणी को जलाती है, परन्तु चिंता तो जीते जी जला डालती है।

चिंता से चतुराई घटे, दु:ख से घटे शरीर।
पाप किये लक्ष्मी घटे, कह गये दास कबीर।।

फकीर की सीख (लघुकथा)

एक बार गाँव में एक बूढ़ा फकीर आया। उसने गाँव के बाहर अपना आसन जमाया। वह बड़ा होशियार फकीर था। वह लोगों को बहुत सी अच्छी-अच्छी बातें बतलाता था। थोड़े ही दिनों में वह मशहूर हो गया। सभी लोग उसके पास कुछ न कुछ पूछने को पहुँचते थे। वह सबको अच्छी सीख देता था।

गाँव में एक किसान रहता था। उसका नाम रामगुलाम था। उसके पास बहुत सी जमीन थी, लेकिन फिर भी रामगुलाम सदा गरीब रहता था। उसकी खेती कभी अच्छी नहीं होती थी।

धीरे-धीरे रामगुलाम पर बहुत सा कर्ज हो गया। रोज महाजन उसे रुपये के लिए तंग करने लगा। लेकिन खेतों में अब भी कुछ पैदा नहीं होता था। रामगुलाम खुद तो खेतों में बहुत कम जाता था। वह सारा काम नौकरों से लेता था। उसके यहाँ दो नौकर थे। वे जैसा चाहते, वैसा करते थे।

आखिर महाजन से तंग आकर रामगुलाम ने अपनी आधी जमीन बेच दी। अब आधी जमीन ही उसके पास रह गई। जिन खेतों में बहुत कम पैदावार होती थी वही रामगुलाम ने बेच दिये थे। जिस किसान ने उसकी जमीन ली थी वह बड़ा मेहनती था। वह अपना सारा काम अपने हाथों से करने की हिम्मत रखता था। जो काम उससे न होता वह मजदूरों से कराता, पर रहता सदा उनके साथ ही था। वह कभी अपना काम मजदूरों के भरोसे नहीं छोड़ता था।

पहली ही फसल में उस किसान ने उन खेतों को इतना अच्छा बना दिया कि उनमें चौगुनी फसल हुई। रामगुलाम ने जब यह देखा तो वह अपने भाग्य को कोसने लगा। इधर उस पर और भी कर्ज हो गया और उसको बड़ी चिन्ता रहने लगी।

आखिर एक दिन वह भी उस फकीर के पास गया । उसने बड़े दुख के साथ अपने दुर्भाग्य की कहानी फकीर से कह सुनाई। फकीर ने सुनकर कहा-अच्छी बात है, कल हम तुम्हें बताएँगे ।
रामगुलाम चला आया। उसी रात को फकीर ने गाँव में जाकर रामगुलाम की दशा के सब कारणों का पता लगा लिया। दूसरे दिन उसने रामगुलाम के पहुँचने पर कहा-तुम्हारे भाग्य का भेद सिर्फ 'जाओ और आओ' में है। वह किसान 'आओ' कहता है और तुम 'जाओ' कहते हो। इसी से उसके यहाँ खूब पैदावार होती है, और तुम्हारे कुछ नहीं ।

रामगुलाम कुछ भी न समझा। तब फकीर ने फिर कहा-तुम खेती का सारा काम मजदूरों पर छोड़ देते हो। तुम उनसे कहते हो--जाओ ऐसा करो, पर खुद न उनके साथ जाते हो, न काम करते हो। पर वह किसान मजदूरों से कहता है-आओ, खेत में चलें' वह उनके साथ-साथ जाता है, और साथ-साथ मेहनत करता है। मजदूर भी उसके डर से खूब मेहनत करते हैं। तुम्हारे मजदूरों की तरह वे मनमाना काम नहीं करते । इसलिए अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारे खेतों में भी खूब पैदावार हो तो 'जाओ' छोड़कर 'आओ' के अनुसार चलना सीखो ।

रामगुलाम ने फकीर की बात मान जी । उस दिन से आलस्य त्यागकर वह अपने खेत में मजदूरों के साथ कड़ी मेहनत करने लगा। अब उसके उन्हीं खेतों में खूब फसल होने लगी ।

साभार-बालबोध

> बिजली की रोशनी से रात्रि का कुछ अंधकार दूर हो सकता है, किन्तु सूर्य का काम बिजली नहीं कर सकती। इसी भाँति हम विदेशी भाषा द्वारा सूर्य का प्रकाश नहीं कर सकते। साहित्य और देश की उन्नति अपने देश की भाषा द्वारा ही हो सकती है।
>
> पं मदन मोहन मालवीय

खेल–खेल में सीखें हिन्दी

आओ बच्चों आज हम खेल-खेल में हिन्दी व्याकरण को सीखने का प्रयास करते हैं। सबसे पहले हम लोगों को जानना होगा कि-

“व्याकरण”[Grammer] कहते किसे हैं? सरल शब्दों में कहें तो जैसे जब आप लोग कोई गलती करते हैं तो आप लोगों के मम्मी-पापा या टीचर आपको समझाकर सही रास्ता दिखलाते हैं वैसे ही ‘व्याकरण’ हमें भाषा का सही प्रयोग करना सिखलाता है। कहने का मतलब है कि “व्याकरण भाषा का नियामक होता है जो प्रयोग में लाई जाने वाली भाषा को नियम में बांधता है और बोलते या लिखते समय विषय के अनुसार सही शब्दों और वाक्यों का प्रयोग सिखलाता है।”

लेकिन व्याकरण समझने के लिए सबसे पहले समझना होगा कि भाषा किसे कहते हैं? क्या आपको पता है कि हमारी ही तरह से सभी पशु-पक्षी, जानवर और पेड़-पौधे भी आपस में बात करते है, उनकी अपनी अलग-अलग भाषा होती है, चूंकि, वह हमारी तरह से स्पष्ट रूप से लिखकर अपनी बात नहीं कर सकते इसलिए ज्यादातर वे संकेत की ही भाषा का उपयोग करते हैं। जाहिर सी बात है आपकी तरह से न तो वे स्कूल जाते हैं और न ही उनके मम्मी-पापा घर में उनको सिखलाते हैं। हाँ जिन बच्चों ने किसी पशु या पक्षी को अपने घर पर पाला है उन्हें तो यह अच्छे से समझ में आ गया होगा। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि संकेत से या बोल कर अथवा लिख कर अपनी बात को दूसरे तक पहुंचाने या किसी बात को बताने के लिए जिस माध्यम का हम प्रयोग करते हैं, उसको ‘भाषा’ कहते हैं। आपको ये भी पता होना चाहिए कि केवल भारत में ही कई भाषाएँ प्रचलन में हैं और पूरी दुनिया में तो हजारों भाषाएँ बोली, लिखी और पढ़ी जाती हैं जिनका अपना अलग-अलग व्याकरण होता है।

अभी तक आप लोग अंग्रेजी और हिन्दी वर्ण-माला को तो समझ ही चुके हैं। तो चलो कुछ परिभाषाओं को जान लेते हैं:

1. भाषा: विचारों के आदान-प्रदान के माध्यम को भाषा कहते हैं जिसके मुख्य तीन रूप होते हैं: सांकेतिक, मौखिक और लिखित।

2. वर्ण या अक्षर: मुख से निकलने वाली सबसे छोटी ध्वनि को वर्ण या अक्षर कहते हैं।

3. लिपि: वर्णों या अक्षरों को लिखने के लिए जिन संकेतों का प्रयोग किया जाता है उसे लिपि कहते हैं। हिन्दी भाषा को लिखने में जिस लिपि का प्रयोग किया जाता है उसे ‘देवनागरी लिपि’ कहते हैं।

4. शब्द: वर्ण या वर्णो का वह समूह जिसका कोई अर्थ अथवा प्रयोजन हो शब्द कहलाता है, जैसे: क+म+ल=कमल, प+अ+न+ई=पानी ।

5. वाक्य: दो या दो से अधिक शब्दों के साथ आने से वाक्य बनता है, जैसे: राम+घर+जाता+है=राम घर जाता है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि हर एक शब्द अर्थ की दृष्टि से एक स्वतंत्र इकाई होता है, लेकिन जब यह अन्य शब्दों के साथ मिलाकर लिखा जाता है तो वाक्य का निर्माण होता है।

कुल मिलकर ‘व्याकरण’ मुख्य रूप से तीन बातों में हमारा मार्गदर्शन करता है:

1. वर्ण-विचार: आपको पता ही होगा कि जैसे अँग्रेजी भाषा में vowel and consonant मिलकर 26 letter होते हैं उसी प्रकार से हिन्दी-वर्णमाला में स्वर [vowel] व्यंजन [consonants] और संयुक्त व्यंजन मिलाकर कुल 51 वर्ण होते हैं।

2. शब्द-विचार, तथा;

3. वाक्य-विचार

चूंकि हमारा आज का विषय ‘शब्द-विचार’ पर केन्द्रित है अतः आज हम हिन्दी व्याकरण के अंतर्गत शब्दों की रचना, शब्दों के प्रयोग, शब्दों के भेद आदि पर बात-चीत करेंगे:

आपको मैं बताती चलूँ कि यूं तो हिन्दी-वर्णमाला के सभी वर्ण अपने आप में पूर्ण हैं परंतु उनकी सार्थकता तभी है जब, जैसा हमने ऊपर बतलाया है कि, दो या उससे अधिक वर्ण मिलकर एक सार्थक शब्द का निर्माण करें, जैसे: च+ म+न =चमन।

आपको पता ही है कि हम सभी लोग हरदम कुछ न कुछ या तो सोचते रहते हैं या करते रहते हैं। बीच-बीच में अगल-बगल अपने दोस्तों या और किसी से बात भी करते रहते हैं। कहने का मतलब है कि हम किसी काम को करने के पहले सोचते हैं फिर आपस में विचार करते है और फिर उस काम को करते हैं। यानि सोचने के बाद और काम करने के पहले आपस में विचार-विमर्श करने के लिए हमें एक भाषा की जरूरत होती है और विषय के अनुरूप उस भाषा के शब्दों की आवश्यकता पड़ती है।

बच्चों! आपको यह भी पता होना चाहिए कि अँग्रेजी भाषा को छोडकर भारत में बोली जानेवाली सभी भाषाएँ संस्कृत भाषा से ही निकली हैं। कहने का तात्पर्य है कि सभी भाषाओं में आपको संस्कृत भाषा से लिए गए शब्द मिलेंगे। इस प्रकार संस्कृत भाषा को सभी भाषाओं की जननी कहा जाता है।

शब्दों के भेद:

मुख्य रूप से निम्नलिखित चार दृष्टियों से हिन्दी भाषा में प्रयोग किए गए शब्दों के भेद किए जा सकते हैं:

स्रोत के आधार पर :-

1. तत्सम: जो शब्द संस्कृत भाषा से बिना किसी बदलाव के मूल रूप में ही हिंदी भाषा में प्रयोग हो रहे हैं उन्हें तत्सम शब्द कहते हैं, जैसे: आम्र, हस्त,

अग्नि उज्ज्वल आदि।

2. तद्भव: ऐसे शब्द जो संस्कृत और प्राकृत से विकृत होकर हिंदी में प्रयोग किए जा रहे हैं वह तद्भव शब्द कहलाते हैं, जैसे: आम, हाथ, आग, उजला आदि।

3. विदेशज: विदेशी भाषाओं से हिंदी में आए शब्दों को विदेशज शब्द कहते हैं। आपको जानकर यह प्रसन्नता होगी कि हिन्दी भाषा में फारसी, अरबी, तुर्की, अंग्रेजी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, भाषाओं के बहुत से शब्द प्रयोग में लाये जा रहे हैं, जैसे: फारसी शब्द- आईना, बाजार, हफ्ता, अरबी शब्द- अमीर, कानून, तकदीर; तुर्की शब्द- बुलबुल, तोप, दारोगा; अँग्रेजी शब्द- स्कूल, नोटिस, स्टेशन; पुर्तगाली शब्द- पादरी, बाल्टी, कमीज; फ्रांसीसी शब्द- कूपन, कारतूस आदि। इसी प्रकार से और भी भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हिन्दी भाषा में बहुतायत से हो रहा है।

4. देशज या देशी: अपने ही देश की अन्य भाषाओं जैसे गुजराती, मराठी, पंजाबी, बंगला आदि और स्थानीय बोलियों जैसे ब्रज, अवधी, बुंदेलखंडी आदि के जो शब्द हिन्दी भाषा में शामिल हो गए हैं उनको देशज या देशी शब्द कहते हैं, जैसे: खुरपी, रोटी, पगड़ी, खिड़की आदि।

रचना के आधार पर :

रचना के आधार पर शब्दों के तीन भेद हैं;

1. रूढ़: जिन शब्दों को तोड़ने पर उनका कोई अर्थ नहीं रह जाता है उनको रूढ़ शब्द कहते हैं, जैसे: नाक, कान, हरा, नीला आदि।

2. यौगिक: जब दो शब्दों जिनके अपने अलग-अलग अर्थ हो के मिलने पर एक तीसरा सार्थक शब्द बनता हो तो उसे यौगिक शब्द कहते हैं,

जैसे: कार्य+आलय=कार्यालय, प्रधान+मंत्री=प्रधानमंत्री,
घुड़+सवार=घुड़सवार आदि।

रूढ़ शब्दों को मूल शब्द भी कहा जाता है परंतु मूल शब्दों में उपसर्ग और प्रत्यय लगाकर भी योगरूढ़ शब्दों की रचना की जाती है; आइये समझें कैसे?

i. उपसर्ग : उपसर्ग उस शब्दांश या अव्यय को कहते हैं जो किसी मूल शब्द के पहले जुड़कर मूल शब्द को विशेष अर्थ वाला शब्द बना देता है, जैसे 'हार' का अर्थ है 'पराजय' लेकिन हार के आगे 'आ' उपसर्ग जोड़ देने से 'आहार' बन जाता है जिसका मतलब होता है 'भोजन'। इसी प्रकार से हिन्दी में आ,अप,अनु,नि,अधि जैसे अनेक उपसर्गों का प्रयोग नए शब्दों की रचना में किया जाता है।

ii. प्रत्यय: प्रत्यय उस शब्दांश या अव्यय को कहते हैं जो किसी मूल शब्द के बाद में जुड़कर मूल शब्द को विशेष अर्थ वाला शब्द बना देता है, जैसे: 'बेल' एक फल होता है लेकिन उसमें बाद में 'न' प्रत्यय जोड़ देने से 'बेलन' बन जाता है जिससे हम सभी के घरों में रोटी बनाई जाती है। इसी प्रकार ता, वाला, आवा, आई जैसे अनेक प्रत्ययों का प्रयोग नए शब्दों की रचना में किया जाता है।

अर्थ के आधार पर-

मुख्य रूप से अर्थ के आधार पर शब्दों के तीन प्रकार होते हैं:

1. एकार्थी शब्द: जिन शब्दों का प्रयोग केवल एक ही अर्थ में होता है उन्हें एकार्थी शब्द कहते हैं, जैसे: पुस्तक, घोड़ा आदि।

2. समानार्थी या पर्यायवाची, शब्द: जिन शब्दों के अन्य समानार्थी शब्द होते हैं, जैसे: अमृत-पीयूष, सुधा, अमिय। दौलत-अर्थ, द्रव्य, मुद्रा, लक्ष्मी, धन आदि।

3. विपरीत अर्थी या विलोम शब्द- जो शब्द किसी अन्य शब्द का विपरीत भाव प्रकट करते हैं, जैसे: दिन का रात, आदि का अंत और सुख का दुख आदि।

प्रयोग के आधार पर-

प्रयोग के आधार पर शब्दों के दो भेद होते हैं:

1. विकारी शब्द: जिन शब्दों में लिंग, वचन, कारक अथवा काल के अनुसार बदलाव होता रहता है, उन्हें विकारी शब्द कहते हैं। विकारी शब्द चार प्रकार के हैं:

i. संज्ञा [Noun]- किसी भी व्यक्ति, जीव, स्थान, वस्तु, विचार या भाव के नाम को संज्ञा कहते हैं जैसे: राम, श्याम, घोड़ा, पीला, नीला, लखनऊ, हिमालय आदि।

ii. सर्वनाम [Pronoun]- जो शब्द संज्ञा के स्थान पर आकर बार-बार संज्ञा की पुनरावृत्ति को रोकते हैं वह सर्वनाम कहलाते हैं जैसे: यह, वह, वे, उनके आदि।

iii.विशेषण [Adjective]- जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता को प्रकट करता है वह विशेषण कहलाता है जैसे: अच्छा, बुरा, खट्टा-मीठा, सुंदर आदि।

iv. क्रिया [Verb]- जिन शब्दों से किसी काम का होना या करना प्रकट होता है उसे क्रिया कहते हैं जैसे: जाता है, गया, गाता है आदि।

उदाहरण: महेश ने जो आम खाया वह खट्टा था।

संज्ञा- महेश, आम

सर्वनाम- जो, वह [आम] के लिए प्रयोग किया गया है।,

विशेषण- खट्टा [आम] की विशेषता बतलाता है।,

क्रिया- खाया

2. अविकारी शब्द: जिन शब्दों में लिंग, वचन, कारक अथवा काल के अनुसार कोई बदलाव नहीं होता उन्हें अविकारी शब्द कहते हैं। अविकारी शब्द भी चार प्रकार के हैं:

i. क्रिया-विशेषण [Adverb]- जिन शब्दों से क्रिया की विशेषता प्रकट होती है, जैसे: धीरे-धीरे चलना। इसमें चलना क्रिया है और धीरे-धीरे क्रिया विशेषण है।

ii. संबंध बोधक [Preposition]- यह शब्द या शब्दों का समूह है जो आम तौर पर किसी संज्ञा या सर्वनाम के बाद में आता है और वह उस संज्ञा या सर्वनाम का सम्बन्ध किसी दूसरे शब्द से स्थापित करता है, जैसे: पुस्तक मेज पर रखी है। इसमें 'पर' संबंध बोधक है और पुस्तक का संबंध मेज से स्थापित करता है।

iii. समुच्चय बोधक [Conjunction]- यह शब्द या शब्दों का समहू है जो दो शब्दों या वाक्यों को जोड़ता है, जैसे: दो और दो चार होते हैं। यहाँ 'और' समुच्चय बोधक है।

iv. विस्मयादि बोधक [Interjection]- जो शब्द विस्मय, भय, हर्ष, घृणा क्रोध आदि भावों को व्यक्त करे, जैसे- अहा! आनंद आ गया। यहाँ 'अहा' विस्मयादि बोधक है।

बच्चों! ये हिन्दी भाषा में प्रयोग होने वाले शब्दों के संबंध में एक परिचयात्मक लेख है। आशा है आपको रुचिकर लगा होगा। जैसे-जैसे आप बड़ी कक्षाओं में जाएंगे, आप और भी छोटी-छोटी परंतु महत्त्वपूर्ण बातें सीखेंगे। आपको पता ही है कि जैसे दो या दो से अधिक वर्ण मिलकर एक शब्द बनाते हैं उसी प्रकार से दो या दो से अधिक शब्दों को मिलाकर वाक्य बनाया जाता है। हमारा प्रयास होगा कि हिन्दी भाषा के वाक्य कैसे बनते हैं, वाक्य कितने प्रकार के होते हैं, वाक्य बनाए क्यों जाते हैं, आदि के बारे में आपको बताया जाय। अच्छा बच्चों, आपसे अंतस के अगले अंक में मिलते हैं।

जयहिंद !

सुनीता सिंह
राजभाषा प्रकोष्ठ

देखो! बदल रहा है भारत

सोने की चिड़िया बनने को,
फिर से मचल रहा है भारत।
देखो! बदल रहा है भारत।।
संपूर्ण विश्व का धर्मगुरू व,
पथ-प्रदर्शक था भारत।
अंग्रेजों ने लूट-पाट कर,
नाजुक कर डाली थी हालत।
तकनीक एवं मेहनत के बल पर,
फिर से संभल रहा है भारत।
देखो! बदल रहा है भारत ।।
मंगलयान की देख उड़ान,
पूरी दुनिया हुई हैरान।
संपूर्ण विश्व में भारत माँ का
हो रहा है जय जय गान।
शिक्षा और स्वच्छता के दम पर,
फिर से संवर रहा है भारत।
देखो बदल रहा है भारत।
दुनिया में वर्चस्व को लेकर,
जब मचा हुआ है घमासान।
इस समय भी माँ भारती,
मानती सबको भाई समान।
आतंकवाद के विरुद्ध पर,
ध्रुव सा अटल रहा है भारत।
देखो बदल रहा है भारत ।।
पर शांति की जब हो बात,
हमेशा अव्वल रहा है भारत।
अपने भारत की महिमा का,
किन शब्दों में करूँ गुनगान।
शांति का ये दूत भुवन में,
कैसे इसका करूँ बखान।
योग सिखा कर जन-जन को ,
दुनिया बदल रहा है भारत।
बावजूद सारी खूबियों के
सर्वदा सरल रहा है भारत।
देखो! बदल रहा है भारत।

प्रियंका रानी दुबे
परिसरवासी

बदलता भारत : स्वास्थ्य विश्लेषण

स्वतंत्रता के पश्चात् निश्चय ही भारत ने प्रगति की ओर चौतरफा कदम बढ़ाए हैं, चाहे वह ज्ञान विज्ञान का क्षेत्र हो, प्रौद्योगिकी का हो उद्योग का। परोक्ष रूप से इसका प्रभाव स्वास्थ्य समस्याओं पर भी पड़ा है और इससे स्वास्थ्य के रेखाचित्र में बदलाव लाया है। 50, 60 एवं 70 के दशक में भारत के शिशु, विशेषकर नवजात शिशु संक्रामक रोगों और कुपोषण (पोषण की कमी) से जूझ रहे थे। भारत सरकार द्वारा चलाए गए राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम एवं संक्रामक रोग नियंत्रण कार्यक्रम से देश की नवजात शिशु मृत्यु दर में काफी गिरावट आई है साथ ही हरित एवं श्वेत क्रांति ने भारत की जीवन प्रत्याशा को 1947 के 31 वर्ष से आज 2015 में 68 वर्ष पर पहुँचा दिया है।

80 के दशक से प्रारंभ हुई प्रौद्योगिकी क्रांति ने भारत को धीरे-धीरे बेहतर जीवन शैली तो दी परन्तु साथ ही साथ इससे होने वाली अन्य स्वास्थ्य समस्याएं (जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, मोटापा, हृदयाघात, कैंसर आदि) भी प्रदान कीं। इस प्रकार औसत आयु के बढ़ने और जन्म दर के कम होने के साथ रोगों के रेखाचित्र में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन (epidemiological transition) आ गया है। हमने शारीरिक गतिविधियाँ कम कर दी वहीं नई पीढ़ी पाश्चात्य खान-पान – कोलड्रिंक, पिज़्ज़ा, बर्गर, पेस्ट्री जैसे फास्ट फूड की ओर आकर्षित हो गई। सामाजिकता के कम होने और प्रतिद्वंदिता के बढ़ने से अधिकाधिक लोग आज तनाव और अवसाद के शिकार होते जा रहे हैं। तनाव उपरोक्त जीवन शैली से संबन्धित रोगों (life style diseasè) को निमंत्रित करने का एक प्रमुख कारण है।

वर्तमान में भारत में 65 मिलियन से अधिक मधुमेह रोगी हैं। यह स्वयं में एक कारण है जिससे भारत में निरंतर हृदयाघात, पक्षाघात, किडनी खराब होने के मरीज बढ़ते जा रहे हैं।

वर्तमान में प्रत्येक व्यक्ति को जागरूक करने की आवश्यकता है कि वह कैसे इस बदलती स्वास्थ्य समस्या से बच सके।
इनसे निम्न तरीकों से बचा जा सकता है:

1. हफ्ते में 6 दिन, 40 मिनट का प्रतिदिन शारीरिक व्यायाम जैसे- तेज चलना, साइकिल चलाना, योग व तैराकी।

2. अपने वजन के अनुसार, 20 कैलोरी प्रति किलोग्राम का औसत भोजन करें।

3. पाश्चात्य खान-पान, शराब, धूम्रपान, तम्बाकू आदि का सेवन न करें। ऐसा पाया गया है कि न केवल भारत में अपितु विकसित देशों में भी धूम्रपान मृत्यु के कारकों का एक प्रमुख घटक है।

4. 40 वर्ष की आयु के पश्चात निरन्तर प्रतिवर्ष स्वास्थ्य की जाँच-पड़ताल करायें तथा चिकित्सक की सलाह पर अमल करें। अपने चिकित्सक पर विश्वास रखें।

5. कार्य एवं मनोरंजन में सामंजस्य रखें। मैंने प्राय: देखा है कि कार्य पर बहुत अधिक ध्यान और मनोरंजन जैसे- मित्रता, सैर सपाटा, साहित्य का अध्ययन, सिनेमा देखना, संगीत का आनंद लेना का अभाव व्यक्ति में अवसाद का एक कारण बन जाता है जो अनेक प्रकार के रोगों को जन्म देता है।

6. अपने शौक जरूर पूरा करें।

डॉ.राजीव कुमार जायस
मुख्य चिकित्साधिकारी
स्वास्थ्य केन्द्र

विचार

अगर सफल और प्रतिष्ठित बनना है, तो झुकना सीखो। क्योंकि जो झुकते नहीं, समय की हवा उन्हें तोड़ देती है।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

गौ–ग्रास

विज्ञान एवं तकनीक के इस उच्च शिक्षण संस्थान की प्राकृतिक सुन्दरता और वनसम्पदा पर परिसर का हर निवासी नाज करता है। संस्थान परिसर में पहले कभी-कभी मौसियाँ भी यहाँ की वनसम्पदा में विचरण करने अथवा उसका रसास्वादन करने चली आया करती थीं। मौसी का तात्पर्य यहाँ गायों से और वनसम्पदा का अभिप्राय परिसर में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध घास से है। लेकिन संस्थान की कई व्यवस्थाओं के परिप्रेक्ष्य में परिसर में मौसियों का प्रवेश बहुत समय से निषिद्ध है। शुरू-शुरू में जब मौसियों पर परिसर में अंकुश लगाया गया तब मौसी और वन सम्पदा की मानसिक स्थिति क्या हुई होगी, उसी का यहाँ प्रतीकात्मक संवाद के रूप में चित्रण किया गया है।

वनसम्पदा- मौसी! आपको अपने वैज्ञानिक परिसर में देखकर आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ। आपसे कितने दिनों बाद मुलाकात हो रही है? लेकिन इस बीच मैं आपका बराबर स्मरण करती रही हूँ। मुझे ज्ञात है कि आपके बारे में संस्थान ने अपने सुरक्षा नियम काफी सख्त कर दिये हैं जिसकी वजह से आपका संस्थान परिसर में प्रवेश पाना लगभग नामुमकिन हो गया है, पर अन्दर कहीं न कहीं विश्वास था कि कभी न कभी आपसे मुलाकात का संयोग बनेगा जरूर परन्तु कब, यह अपने आपमें एक प्रश्न था। आपके बारे में आज ही सुरक्षा कर्मियों को व्हाटसऐप मैसेज पढ़ते हुए सुना तो सहसा विश्वास नहीं हुआ और उसी के तत्काल बाद आपके दर्शन भी हो गये, मैं धन्य हो गयी।

मौसी– आपने ठीक कहा वनसम्पदा, विज्ञान के इस परिसर में आपको सुखपूर्वक निवास करते और फलते-फूलते देखकर मैं हमेशा भाव विभोर हो जाती हूँ। आपकी यहाँ कितनी व्यवस्थित एवं सुन्दर परवरिश होती है? आपके भाई बंधुओं को समय-समय पर खाद, सिंचाई, कटाई, छंटाई, रखरखाव, खरपतवार निकाला जाना आदि सभी कितने अच्छे तरीके से होता है। पहले खुद उसकी गवाह हुआ करती थी अब दूसरों से सुनकर पता चलता है। आज अवसर मिला तो इसे गंवाना मुझे गवारा नहीं हुआ और मैं दौड़ी चली आई। आपसे मिलना भी तो था। लगता है मिले हुये जमाना गुजर गया। अंदर आकर जितना सुनती थी, आँखों से सब देख भी लिया। आपसे सही-सही बताऊँ, कानों सुनी पर भरोसा नहीं होता था। अब सारे संदेह मिट गये। सचमुच विज्ञान तकनीक के इस विख्यात उच्च शिक्षण संस्थान के अधिकारी, शिक्षक, विद्यार्थी, कर्मचारी यहाँ तक कि निवासी गण भी इतने प्यार स्नेह से आपकी देख-भाल कर रहे हैं।

आपके भाई बंधु वृक्ष, लताएं, वाटिकायें सभी पुष्पित-पल्लवित हो रही हैं। वे सब आपको अपनी धरोहर समझते हैं। वहीं हम हैं, रहते हैं इस परिसर के

बाहर और डबडबायी आँखों से गली कूंचों में मंडरा कर, कचरे के ड्रम में मुँह मार कर रात-दिन पेट भरने की जुगत में ही लगे रहते हैं। आप समझ सकती हैं कि बाहर हमारी क्या हालत होगी? न नहाने का जुगाड़, न नियमित पेट भर भोजन, न कोई देख-भाल। मेरे मन में अब बार-बार यही प्रश्न गूँजते हैं। भला जब हम लोग सबके साथ प्रेमपूर्वक पूरी तरह सहयोग करती हैं। तब भी हमारी इतनी बेकदरी? हमने किसी का कुछ बिगाड़ा भी तो नहीं है।

वनसम्पदा- मौसी आपकी बात सुनकर मुझे बहुत दर्द हो रहा है। आप सबके साथ ऐसा व्यवहार? मेरा तो कलेजा ही फट गया। पर करें भी तो क्या? हम स्वयं परवश हैं। आपका सबका पेट भर सेवन कराने में सर्वदा सक्षम होकर भी आज हम कितने लाचार हैं?

मौसी- कुछ न कहिये। हम तो केवल मूलभूत सुविधाएं चाहते हैं। परिसर के भीतर हो या बाहर, सबसे हमारी इतनी ही अपेक्षा है कि वे हमें बस इतना दे दें कि हमारा पेट भर जाए। हमारा वादा है हम उन्हें पूरा सहयोग देंगे, उनके लिए अपना सारा दूध देकर जैसा कि हम सदा से करते भी आये हैं, उनका पोषण करती रहेंगी। आप तो जानती ही हैं कि हमारी कई बहनें तो स्वयं कामधेनु प्रजाति से ताल्लुक रखती हैं और अपने प्रचुर दुग्ध से न जाने कितने लोगों की भूख प्यास को संतुष्ट कर सकती हैं।

वनसम्पदा- मौसी आप चिन्ता न करें। विश्वास रखें कि आपकी बेहतरी के लिए मनुष्य समुदाय अवश्य ही कुछ न कुछ अच्छी योजनाएं लेकर आगे आयेगा। आपके संरक्षण हेतु वह कोई न कोई पहल जरूर करेगा। मैं यह

अपने यहाँ के अनुभव के आधार पर कह रही हूँ। मानव आजकल कुछ अपनी ही परेशानियों में घिरा है लेकिन वह बहुत संवेदनशील है, और बहुत जल्द जैसे ही वह सामान्य होगा, आपके प्रति उसका कर्तव्य बोध जाग्रत हो जायेगा और फिर आपकी सारी परेशानियाँ अतीत की बात बनकर रह जायेंगी।

मौसी- बहुत-बहुत धन्यवाद वनसम्पदा। आपके मुँह मे घी-शक्कर। ईश्वर करे शीघ्र ऐसा ही हो। हम तो गंगा ही नहा लेंगे। आपकी बात से हम सबका सम्बल बहुत बढ़ गया है, भरोसा जाग गया है। लगता है हम निराशा के गर्त से शीघ्र उबर जायेंगे।

अच्छा, कुछ-कुछ भोर होने लगी है। यहाँ के सुरक्षा कर्मी आते ही होंगे। मैं चलती हूँ। ईश्वर आप सबका भला करे, हमेशा ही सुखद स्थिति में रखें। सबको प्यार, आशीष। उम्मीद है फिर जल्द मिलना होगा।

वनसम्पदा-मौसी आप हमारी मौसी माता ही नहीं, आप हमारी कामधेनु माँ हैं। आपने जानकारी देकर हमें धन्य कर दिया। प्रणाम माँ।

मौसी-'कामधेनु माता' वनसम्पदा। यह सम्बोधन सुनने में तो अच्छा लगता है लेकिन तुमने बात छेड़ दी तो कहती हूँ, असलियत कुछ और है लेकिन हाँ, तुम्हारी यह बात सही है कि मनुष्य अत्यंत संवेदनशील है और उसके अंदर सद्बुद्धि, सदाशयता जाग्रत होते देर नहीं लगती। जब इस परिसर में ही प्रकृति के प्रति इतनी संवेदनशीलता है तो हम तो जीवित प्राणी है जिसे कम से कम हिन्दुस्तान में लोगों ने अधिकांशतः आदर दिया है। यहाँ के वैज्ञानिक कुछ भी अद्भुत करने में सक्षम है तो वे निश्चय ही हमें गौ ग्रास दिलाने में सहयोगी होंगे, हमारा संरक्षण करायेंगे।

डॉ. सुकर्मा थरेजा
पूर्व छात्रा

सोच बदलें

विपरीत परिस्थिति हटे और अनुकूल परिस्थिति आये तब हम सुखी रहेंगे, ऐसा सोचते हो तो आप जगत के दास हो गये। हर परिस्थिति परिवर्तनशील और आत्मा अपरिवर्तनशील है, ऐसा सोचते हो तो आप परिस्थिति के स्वामी हो गये।

नाल ने बदल दी घोड़े की चाल

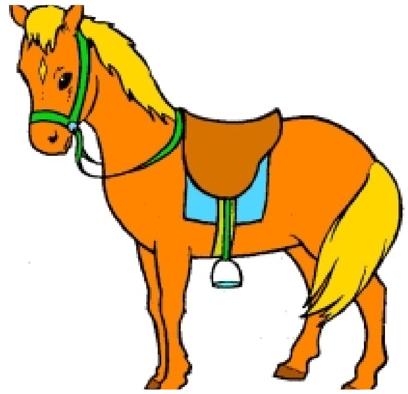

कानपुर शहर और उसके आस पास के क्षेत्र में आज भी 30,000 से अधिक घोड़े हैं, जो ढुलाई का काम करते हैं। ट्रांसपोर्ट नगर से माल उठाकर शहर की तमाम तंग गलियों तक पहुँचाना और ईंट भट्ठो में ईंटों की ढुलाई में लगे ये पशु कई हजार परिवारों का आर्थिक सहारा हैं। यहाँ पाये जाने वाले घोड़े काफी छोटी काठी के हैं। आपको अचंभा होगा यह सुनकर कि छोटे और निर्बल से दिखने वाले अश्व भी अपने मालिक को लेकर, 2 से 2.5 क्विंटल की ट्रॉली और उस पर 2 से 3 क्विंटल का माल लादकर, 8 से 10 घंटे दौड़ता रहता हैं। फिर चाहे कानपुर की कड़क ठंड हो या चिलचिलाती धूप, एक घोड़ा औसतन प्रतिदिन 40 से 50 किलोमीटर का सफर कर ही डालता है। अपने मालिक का चहेता वो क्यों न हो, आखिर परिवार की कमाई का अकेला जरिया वही तो होता है।

राणा जी पशुओं के जानकार व्यक्ति हैं और एक अरसे से पशुओं के स्वास्थ्य पर काम कर रहे हैं। उनका कहना है "घोड़े के स्वास्थ्य का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा उसका पैर है। यूं समझिए कि पैर सही नहीं तो घोड़ा नहीं। एक छोटा सा दोष हो जाये पैर में तो घोड़ा बेकार हो जाता है क्योकि माल ढ़ोने वाले घोड़े पक्की रोड पर चलते हैं।" उनके खुर की सुरक्षा के लिए उन्हें नाल पहनाई जाती है। घोड़ा मालिक जब देखता है कि नाल घिस गयी है तो वो घोड़े को लेकर नालबंद पर जाता है, कुछ वैसे ही जैसे हम बाल काटवाने नाऊ के पास जाते हैं। नालबंद खुर की सफाई और कटाई करते हैं। वो घोड़े को उसके साइज के हिसाब से, नाल को हथोड़ी से पीटकर खुर में बैठाता है। इसके बाद वह 6 से 8 कील लगाकर नाल को खुर में फिट कर देता है। सच में, नाल लगाने की पूरी विधि कोई कलाकृति बनाने जैसी लगती है जिसमें नालबंद जोर लगाकर घोड़े के पैर को अपने पैरों के बीच पकड़कर

संभालता है और तब नाल को फिट कर पाता है। यह काम समय तो लेता है और तब नालबंदी के दिन घोड़े को माल ढोने से छुट्टी करनी पड़ती है।

सदियों पुरानी नालबंदी की तकनीक को हमारे कुशल नालबंद बखूबी करते हैं, फिर भी कील ठोकते हुये देखिये तो दिल तिलमिला जाए। थोड़ी सी चूक हो जाये तो कील खुर के मुलायम हिस्से में घुस जाए और बेचारा घोड़ा लगे लंगड़ाने। अब यह सुनकर आप और भी हैरत में पड़ जायेंगे कि यह नाल आखिर कितने समय चलती है। सिर्फ 5 से 8 दिन। हाँ, आपने सही सुना। हर सप्ताह एक बार तो नालबंद का चक्कर तो लगाओ, कुछ चोट भी खाओ, और साथ में एक दिन के कमाई का नुकसान भी सहो। दोनों ही घोड़ा मालिक के लिए बहुत भारी पड़ते हैं।

जब यह समस्या Rutag तक पहुंची, तो प्रोफेसर संदीप संगल और उनके सहयोगी श्री के. चन्द्र शेखर ने इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकारा। चुनौती इसलिए क्योंकि घोड़े के काम में बहुत से stakeholder थे – घोड़ा मालिक, नालबंद और नाल बनाने वाले। यह सभी शहर के अलग-अलग स्थानों में बसते हैं – कोई यमुना के बीहड़ के गाँव में तो कोई अफीम कोठी की मलिन बस्ती में। परंतु यह स्पष्ट था कि यदि घोड़े की नाल कम दाम में ज्यादा समय तक चल गयी, तो घोड़े के स्वास्थ्य और घोड़ा मालिक की आजीविका के लिए बहुत लाभ दायक साबित होगा। सौभाग्य से श्रमिक भारती के रूप में प्रोजेक्ट को एक सक्षम साथी मिल गया जो पहले से ही घोड़ो के साथ काम कर रहा था। शीघ्र ही Brooke India भी इस प्रोजेक्ट से जुड़ गया जिन्हें विश्व भर में घोड़ो के प्रोजेक्ट का अनुभव था।

6 लोगो की आईआईटी टीम ने, जिसके साथ 2 कुशल नालबंद, 14 घोड़ा मालिक, 2 नाल बनाने वाले लोहार और 3-4 श्रमिक भारती के साथी भी थे, ने मिलकर काम शुरू किया। नाल बनाने वाले लोहार के यहाँ बैठकर कई सप्ताह तक बनाने की विधि का गहराई से अध्ययन किया गया। उनकी बनाई हुई नाल को लैब में लाकर उनका सूक्ष्म निरीक्षण ऑप्टिकल माइक्रोस्कोप, AFM से किया और उसकी hardness और wear resistance भी मापी गई। यह पाया गया कि 900 डिग्री पर सरिया में pearlite और ferrite phase बन रहे हैं। नाल का जीवन काल बढ़ाने के लिए pearlite का प्रतिशत बढ़ाना होगा। नाल बनाने की विधि की कमियाँ भी स्पष्ट हो गईं। प्रो. संगल की लैब में लोहे की सरिया का जिससे अभी नाल बनती है, का विकल्प ढूंढा गया। नई धातुओं को लाया गया, यह ध्यान रखते हुये कि लागत भी न बढ़े और कार्बन का प्रतिशत भी अधिक हो।

टीम ने नाल बनाने की विधि के कई विकल्प सोचे। सबसे पहले गरम धातु को ठंडा करने की दर को अनुकूल बनाया गया – गरम धातु को पंखे के सामने रख कर ठंडा किया और दूसरा सीसा के पाउडर में डुबोकर। इस प्रकार से पाये गए विकल्प के कई मेल तैयार हुये और फील्ड टेस्टिंग शुरू हो गई। 6 महीने तक 300 से अधिक घोड़ों को नई विधि से बनी नाल पहना कर जांच की गई। परिणाम बहुत ही उत्साहजनक थे। नई विधि की नाल का जीवन काल लगातार 25 से 30 दिन तक बढ़ गया और नाल के दाम में भी कोई खास बढ़ोतरी नहीं हुई। खुशी की बात यह रही कि घोड़ा मालिक अपने घोड़ों की खुशी के लिए नालबंदों से आईआईटी की नाल मंगवाते हैं।

इस वर्ष मार्च में राष्ट्रपति भवन में हुये Festival of Innovation में प्रो. संगल और टीम को राष्ट्रपति भवन में एक भाषण के लिए आमंत्रित किया गया। विषय था “उन्नत तकनीक द्वारा जमीनी समस्या का एक रचनात्मक हल।”

श्रीमती रीता सिंह
पूर्व छात्रा

कबीर समुझा कहत है, पानी थाह बताय।
ताकूँ सतगुरु का करे, जो औघट डूबे जाय।।

कबीर कहते हैं कि कोई जानकार ही पानी की गहराई बता सकता है, फिर भी यदि हम उसकी बात पर कान न देकर वहाँ डूब मरें तो इसमें क्या उनका दोष नहीं है? इसी प्रकार सद्गुरु की सीख को ठुकराकर गलत राह पकड़ ली जाए तो कोई कुछ नहीं कर सकता।

कबीरदास

प्रकाश के चमत्कार से कैंसर का निदान

प्राचीन काल से ही मानव जाति का प्रकाश के प्रति एक अभूतपूर्व आकर्षण रहा है। प्रारंभ में प्रसिद्ध वैज्ञानिक अरस्तू (384 ई. पू. - 322 ई. पू.) ने हमें बताया कि हम वस्तुओं को प्रकाश के माध्यम से ही देख पाते हैं। जब यह प्रकाश सूर्य या मोमबत्ती से उत्सर्जित होकर वस्तु से परावर्तित होकर हमारी आँखों में प्रवेश करता है, तो वस्तु हमें नजर आती है। उसके बाद लोगों ने लेंस का आविष्कार किया, जिसका इस्तेमाल सूर्य से आने वाले प्रकाश को एक बिंदु पर केन्द्रित कर के जलाने के लिए किया जाने लगा। साथ ही साथ लेंस पर आधारित अनेक प्रकार के यंत्रों, जैसे दूरदर्शी तथा सरल सूक्ष्मदर्शी का निर्माण होने लगा, जिससे सूर्य, चाँद, तारे तथा अत्यन्त दूर स्थित वस्तु और सुई से भी छोटी वस्तु को देखा जा सकता है। एक ओर जहाँ वैज्ञानिक इन यंत्रों का निर्माण वस्तुओं को देखने के लिए कर रहे थे वहीं दूसरी ओर कुछ चिकित्सकों ने प्रकाश का उपयोग चिकित्सा के क्षेत्र में भी करना प्रारम्भ कर दिया।

पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में ग्रीक फिजीशियन तथा आधुनिक मेडिसिन के जनक हिप्पोक्रेटीस ने सूर्य की रोशनी से घाव भरने की क्षमताओं का प्रचार किया। छठवीं शताब्दी ईसा पूर्व में सर्जरी के जनक सुश्रुत ने प्रकाश का उपयोग त्वचा के रोगों के उपचार में किया जिसका वर्णन सुश्रुत संहिता में किया गया है।

वास्तव में प्रकाश एक विद्युत-चुम्बकीय तरंगों का समूह है, जिसमें परा बैंगनी किरणें, दृश्य किरणें और अवरक्त किरणें मूल रूप से होती हैं।

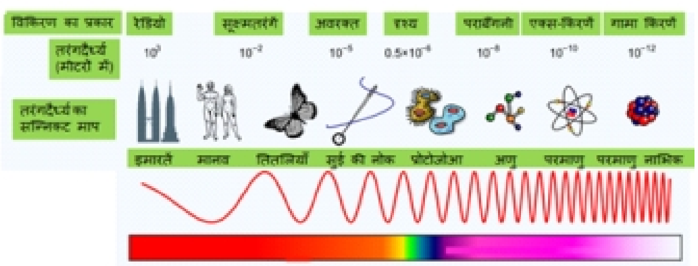

चित्र 1: प्रकाश की तरंगदैर्ध्य एवं भौतिक वस्तुओं के नाप का सन्निकट तुलनात्मक मानद्य

हालाँकि हमारी आँखें केवल दृश्य किरणों को ही अनुभव कर पाती हैं, जिससे हम देख पाते हैं, परन्तु ऐसा नहीं है कि प्रकाश के पराबैंगनी किरणों और अवरक्त किरणों का उपयोग नहीं है। सन् 1903 में मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार डेनिश फिजीशियन नील्स फिन्सेन को त्वचा के क्षय रोग का पराबैंगनी विकिरण द्वारा सफलतापूर्वक इलाज करने पर दिया गया। सन् 1928 में सीएटल (वाशिंगटन, अमेरिका) के इमेट नॉट ने रक्त को पराबैंगनी किरणों से प्रकाशित कर शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर पूर्ति जीवरक्तता (epticemi) का उपचार किया। पराबैंगनी किरणों का उपयोग प्राकृतिक जीवाणुनाशक (ntibiotic) की तरह किया जा रहा है। इन किरणों की सहायता से दाँत के रोगों का निदान एवं उपचार किया जा रहा है। प्रकाश की अलग-अलग तरंगों का इस्तेमाल चिकित्सा में अलग-अलग उद्देश्य के लिए किया जा रहा है। नीले या बैंगनी रंग की किरणों का उपयोग नवजात शिशु को होने वाले पीलिया के उपचार में किया जा रहा है।

निकट-अवरक्त किरणों (near infrared) का उपयोग उच्च रक्त दाब को सामान्य तथा स्थिर करने, रक्त के संचरण को सुधारने, सर्दी, शारीरिक थकान को दूर करने, कान, नाक और गला के सूजन का उपचार करने, गठिया रोग के दर्द को कम करने, तनाव को कम करने, त्वचा के घाव को जल्दी भरने, मुहाँसे एवं चेहरे की झुर्रियों को दूर करने इत्यादि के लिए किया जाता है।

लेजर के आविष्कार ने जैव चिकित्सा के क्षेत्र में एक क्रांति कर दी है। लेजर न केवल एकवर्णी है अपितु इसमें सुसंगत और उच्च शक्ति गुण बहुत सारे प्रयोग की सम्भावना लेकर उत्पन्न हुए हैं। एकवर्णी और उच्च ऊर्जा का प्रकाश प्रतिदीप्ति (fluorescence) भी उत्पन्न करता है जिसकी सहायता से पदार्थ के गुणधर्मों का अध्ययन किया जा सकता है। प्रतिदीप्ति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पदार्थ पर गिराया गया प्रकाश पदार्थ के अणु द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है और एक नया प्रकाश उत्सर्जित होता है जो कि आपतित प्रकाश से बड़ी तरंगदैर्ध्य का प्रकाश होता है।

जैसा कि हम जानते हैं हमारा शरीर ऊतकों से और ऊतक कोशिकाओं से मिलकर बने होते हैं। 1960 के दशक में शोधकर्ताओं ने यह बताया कि हमारे शरीर में बहुत सारे अणु ऐसे हैं जो प्रकाश की पराबैंगनी किरणों और दृश्य किरणों को प्रकीर्णन (cattering) की वजह से फैला देते हैं एवं अवशोषित (absorption) करके प्रतिदीप्ति उत्पन्न करते हैं। ये घटनाएँ नग्न आँखों के लिए अदृश्य होती हैं, परन्तु इसे उपकरणों के माध्यम से देखा जा सकता है। 1980 के दशक की शुरुआत में शोधकर्ताओं ने पता लगाया कि इस प्रतिदीप्ति का अध्ययन करके शरीर के रोगों, जैसे कैंसर आदि का पता लगाया जा सकता है।

चित्र 2: प्रकाश एवं ऊतक की अंत: क्रिया: (अ), (ब) प्रकाश का प्रकीर्णन और अवशोषण (स) प्रतिदीप्ति।

चित्र 2 (अ) एवं (ब) में यह दर्शाया गया है कि टार्च की सामान्य श्वेत किरणें हथेली से ढकने पर लाल दिखती हैं। ऊतकों द्वारा प्रकीर्णन तथा अवशोषण की क्रियाओं की वजह से लाल किरणों के अलावा श्वेत प्रकाश की शेष रंगों की किरणें अदृश्य हो जाती हैं।

कैंसर एक घातक एवं जानलेवा बीमारी है जिसकी पहचान एवं निदान (diagnosi) प्रतिदीप्ति का अध्ययन करके किया जा सकता है। वर्तमान में आधुनिक उपकरणों से युक्त हमारी प्रयोगशाला में विश्व में बड़े पैमाने पर पाए जाने वाले मुँह का कैंसर (oral cancer) एवं गर्भाशय ग्रीवा कैंसर (cervical cancer) का विभिन्न तकनीकों, जैसे फ्लोरेसेंस स्पेक्ट्रोस्कोपी, फ्लोरेसेंस लाइफटाइम इमेजिंग माइक्रोस्कोपी (FLIM), सिंक्रोनस फ्लोरेसेंस स्पेक्ट्रोस्कोपी (SFS), फ्लोरेसेंस ऑप्टिकल टोमोग्राफी(FOT), फोटोअकूस्टिक टोमोग्राफी (PAT), म्यूलर मेट्रिक्स इमेजिंग (MMI) आदि द्वारा निदान करने का शोध कार्य प्रगति पर है। हमारी प्रयोगशाला में प्रतिदीप्ति का प्रयोग करके गर्भाशय ग्रीवा एवं मुँह के कैंसर का निदान करने के उपकरण बनाकर उसकी प्रायोगिकता सिद्ध की जा रही है। यह एक कम खर्चीली एवं कम समय में बिना त्रुटि के सही परिणाम बताने वाली तकनीक है, जिसमें ऊतकों या कोशिकाओं को किसी भी प्रकार की क्षति नहीं होती है।

गर्भाशय ग्रीवा कैंसर एवं इसका निदान:

वर्ष 2014 में प्रकाशित डब्ल्यू. एच. ओ. (World Health Organization) की रिपोर्ट के अनुसार विश्व में लगभग 2,66,000 महिलाओं की मृत्यु इस कैंसर की वजह से हुई जो कि महिलाओं में कैंसर की वजह से होने वाली मृत्यु का 7.5: है। दस में से लगभग नौ महिलाओं की मृत्यु विकासशील देशों में होती है। इस मृत्यु दर को कम करने के लिए गर्भाशय कैंसर का प्रारंभिक अवस्था में पता लगा कर नियंत्रित करना अत्यंत आवश्यक है।

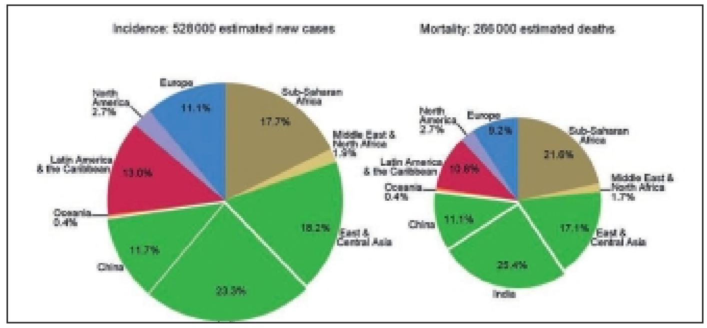

चित्र 3: विश्व के प्रमुख भागों में महिलाओं में गर्भाशय ग्रीवा कैंसर की नयी घटनाओं का एवं कैंसर की वजह से मृत्यु का अनुमानित अनुपात। (स्रोत: वर्ष 2014 में प्रकाशित डब्ल्यू. एच. ओ:WHO) की रिपोर्ट)

हाल ही में हमारी प्रयोगशाला में एक हैण्ड हेल्ड उपकरण का पेटेंट हुआ है जिससे गर्भाशय ग्रीवा कैंसर का प्रारंभिक अवस्था में निदान किया जा सकता है। इस उपकरण का अभी जी. एस. वी. एम. चिकित्सा महाविद्यालय, कानपुर में परीक्षण किया जा रहा है। यह उपकरण ध्रुवीकृत प्रतिदीप्ति (polarized fluorescence) के सिद्धान्त पर आधारित है। इस डिवाइस की सहायता से कैंसर का प्रारंभिक अवस्था में 100% संवेदनशीलता एवं विशिष्टता (sensitivity and specificity) के साथ पता लगाया जा सकता है। इस कार्य के आधार पर शोध विद्यार्थी को अपनी टीम के साथ गांधियन यंग टेक्नोलॉजिकल इनोवेशन पुरस्कार (Gandhian Young Technological Innovation (GYTI) Award) दिया गया।

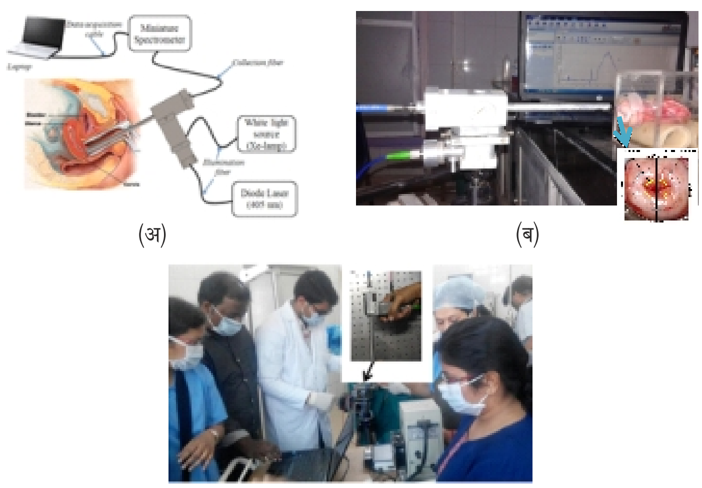

(अ) (ब)

(स)

चित्र 4: पोर्टेबल उपकरण का (अ) कार्टून आरेख, (ब) एक्स-विवो अध्ययन में उपयोग एवं (स) जी. एस. वी. एम. चिकित्सा महाविद्यालय में इन-विवो अध्ययन का फोटोग्राफ।

मुँह का कैंसर एवं इसका निदान:

राजेश दीक्षित एवं उनके सह-लेखकों के द्वारा दी लांसेट जर्नल (The Lancet) में छपे लेख के अनुसार मुँह का कैंसर विश्व में 10 वें स्थान पर है। भारत में मुँह का कैंसर सबसे ज्यादा होता है एवं यह प्रथम स्थान पर है।

उत्तरप्रदेश के औद्योगिक केंद्र कानपुर को आज से करीब चालीस साल पहले तक एशिया का मैनचेस्टर माना जाता था। अब यही शहर पान मसाला और गुटखा के उत्पादन का बड़ा केंद्र बन गया है। पान मसाला, गुटखा एवं तम्बाकू शहर की गली-गली में उपलब्ध है इसलिए इनकी लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इनके लगातार सेवन एवं इलाज के प्रति लापरवाही की वजह से मुँह में छोटा-सा छाला कैंसर में बदल सकता है।

सर्वेक्षण के अनुसार दैनिक जागरण 06/10/2012, कानपुर के जे. के. कैंसर संस्थान में जो कि जी. एस. वी. एम. अस्पताल से जुड़ा हुआ है, कैंसर के प्रति वर्ष लगभग सात हजार नए रोगी आते हैं जिनमें से लगभग दो हजार मुख के कैंसर के होते हैं। चालीस फीसदी में मुख के कैंसर की सम्भावना नजर आती है। शुरूआती लक्षण आने पर यदि व्यक्ति संभल जाये तो जीवन बच सकता है। मुख के कैंसर का प्रारंभिक अवस्था में निदान ही हमारी प्रेरणा का मुख्य कारण बना।

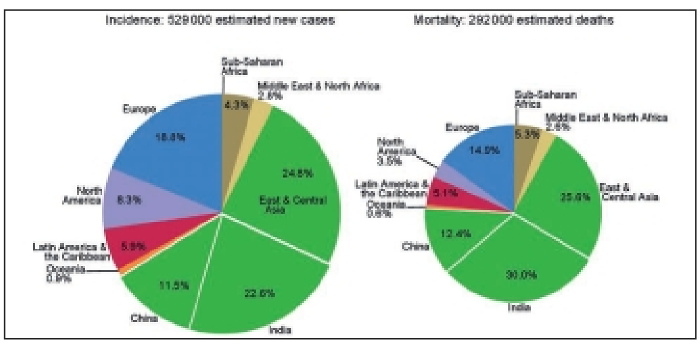

चित्र 5: विश्व के प्रमुख भागों में पुरुषों एवं महिलाओं में मुँह के कैंसर की नयी घटनाओं का एवं कैंसर की वजह से मृत्यु का अनुमानित अनुपात (स्रोत: वर्ष 2012 में प्रकाशित डब्ल्यू. एच. ओ. (WHO) की रिपोर्ट)

हमारी प्रयोगशाला में प्रतिदीप्ति सिद्धांत पर आधारित एक और उपकरण का निर्माण हुआ है जिसका मुँह के कैंसर के निदान के लिए जी. एस. वी. एम. महाविद्यालय में परीक्षण चल रहा है। इस उपकरण की सहायता से कैंसर का प्रारंभिक अवस्था में 84: संवेदनशीलता एवं 100: विशिष्टता (Sensitivity and speciality) के साथ पता लगाया जा सकता है।

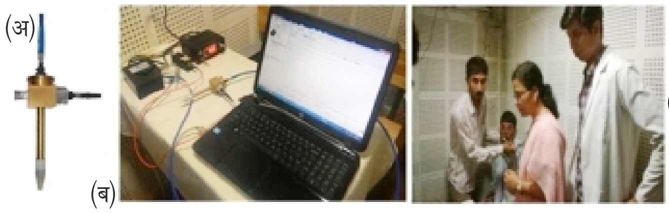

चित्र 6: मुँह के कैंसर के निदान के लिए बनाये गए पोर्टेबल उपकरण का (अ), (ब) फोटोग्राफ एवं (स) जी. एस. वी. एम. चिकित्सा महाविद्यालय में इन-विवो अध्ययन का फोटोग्राफ।

आशा है कि ये दोनों उपकरण आने वाले समय में क्रमशः गर्भाशय ग्रीवा कैंसर एवं मुँह के कैंसर के निदान के लिए उपयोगी साबित होंगे एवं इनको नियमित जाँच तकनीक में शामिल किया जा सकेगा।

इस शोध में शामिल टीम के सभी सदस्यों श्री प्रबोध कुमार पाण्डेय, श्री पंकज सिंह, श्री भरत लाल मीणा, श्री पवन कुमार एवं डॉ उर्विजा सिन्हा को इस लेख में महत्वपूर्ण योगदान के लिए आभार।

प्रो. असीमा प्रधान
भौतिकी विभाग
भा.प्रौ.सं.कानपुर

अमृत बिन्दु

अपने आत्मसुख के बिना मन की भटकन नहीं जायेगी। सुख-दुख, अनुकूलताएं-प्रतिकूलताएं आती जाती रहेंगी, उनको देखने वाला तुम्हारा आत्मदेव नित्य-शुद्ध-बुद्ध है। ऊँ प्रभु...ऊँ, ऊँ आनंद ऊँ अपने भगवद्-स्वभाव को याद करके आनंद में रहो। किसी का बुरा करो नहीं, चाहो नहीं। सत् तुम्हारा साक्षी परमेश्वर ही है। वह सत्चेतन भी, आनंदस्वरूप भी है।

संग्रह स्रोत-जीवन रसायन

अंधेरे से पहले

प्रेमबाबू को लगता है चलने के लिए अब स्टिक की जरूरत है और आंखों की रोशनी भी थोड़ी कम हो गई लगती है .... कानों में भी आवाजें थोड़ी कम आने लगी हैं ... और ये टांगे ... इन्हें क्या हो गया। पिछले 80 बरस से ... नहीं नहीं 80 कहां ... 85 तो पिछले महीने ही पूरे किये तो 2-3 और जोड़ लेते हैं ... हां तो यही 83 बरस से लगातार बिना रूके किसी आह -ऊह के साथ दे रही है। अब ये टांगे भी कमबख्त ....।

महीना भर हुआ प्रेम बाबू का 85वां जन्म दिन मनाया गया था। गुब्बारे खरीदे गये थे लाल, हरे, पीले, नीले और पोल्का डाट वाले भी .... कहां से ले आई थी गिन्नी इतने रंग .... कहती थी बाउजी जितने रंग आपकी जिंदगी के उतने ही रंग गुब्बारों के ....। 'मेरी जिंदगी के रंग .... अरे तुझे कैसे पता मेरी जिंदगी के रंग ....'

लो, आप ही तो कहते थे हमारी जिंदगी बड़ी रंग-बिरंगी थी ... तरह-तरह के रंगों से भरी हुई।

अच्छा ऐसा कहा था मैंने। प्रेम बाबू कुछ याद करते।

अब भूल गए क्या ... बाउजी, भुलक्कड़ हो गए क्या ... मेमोरी लॉस ..।

और प्रेम बाबू गिन्नी के कान पकड़ने को लपकते।

गिन्नी जानती थी कि प्रेम बाबू को याददश्त खत्म होने की बात कहना माने उनके क्रोध का शिकार होना।

'अरे याददश्त कमजोर हो मेरे दुश्मनों की ..... जिसे जो जी में आता है कह कर चला जाता है ..... तकिया कलाम हो जैसे .... बाल क्या सफेद देख लिए बस एक जुमला हवा में फेंक दिया'।

'उमर हो गई है न.... याददाश्त कमजोर हो गई है .....'

'बस बाउजी .... बस' ... गिन्नी ऐसे समय में उन्हें ढ़ाढस बंधाती' 'अरे उनके कहने से क्या .... किसी के कहने से याददाश्त कमजोर थोड़े ही हो जाती है ....' ऐसा लगता गिन्नी उनकी पोती नहीं कोई बड़ी बुजुर्ग हो और वे एक नन्हा सा बच्चा !

गिन्नी दद्दा कहो ... दद्दा भी तो सुनने में कितना प्यारा शब्द लगता है ....।

'नहीं कहूंगी .... नहीं कहूंगी ... नहीं कहूंगी .... गिन्नी लगातार सर हिलाती और प्रेम बाबू के गले में अपनी नन्हीं नन्हीं बाहें लपेट कर खड़ी हो जाती ...'

'जाने दो बेटा नाम में क्या रखा है जैसे चाहे ले लो जिसमें इसका दिल खुश हो ...'

प्रेम बाबू बहू को समझाते। गिन्नी के लिए बाउजी कोई रिश्ता नहीं था वह जबान पर चढ़ गया एक शब्द था जिससे उसे प्यार हो गया था।

और इससे अलग किसी शब्द से मानों वह खुद कनेक्ट हो नहीं पाती थी।

'नाम-वाम में कुछ नहीं है दद्दा कहो, बाउजी कहो बस प्यार मिलता रहे – प्यार जिन्दगी को आबाद कर देता है ....' वे कहा करते।

तो कहीं प्यार की कोई कमी तो नहीं रह गई गिन्नी की जिन्दगी में ... उनकी तरफ से ... या फिर माता-पिता की तरफ से ....।

जी करता है एक बार बेटे बहू से पूछें कि उन दोनों ने तो गिन्नी को प्यार देने में कहीं कोई कंजूसी तो नहीं की ....

लेकिन अब इन बातों में रखा ही क्या है ... उन्हें दु:ख ही तो होगा।

प्रेम बाबू के लिए यह सब कुछ किसी पहेली की तरह है।

जिन्दगी मुश्किल हो गई है ... !!

जिंदगी मुश्किल हो गई है ?? कैसे मुश्किल हो जाती है जिंदगी ? कौन सा पैमाना है जो इन मुश्किलों को मापता है ? कैसी होती है 15 सालों की जिंदगी की मुश्किलें??

और वे यादों में गुम हो जाते हैं कैसी थी उनकी अपनी 15 साल की उमर वाली जिंदगी ... कौन प्यार करता था और कौन डांटता था... किससे पिटते थे और कौन कान उमेठता था, किसे देखकर रश्क होता था और किसे देखकर नफरत ... प्रेम बाबू को याद आया कि मां तो बहुत प्यार करती थी और यह भी याद आया कि मां के उस प्यार को वे अपना अधिकार ही समझ लेते थे जैसे उसका कोई मोल ही न हो .. बस ऐसे ही पा लिया हो। बस यूं ही दे दिया गया हो। पिताजी के थप्पड़ कितने याद रहते थे, उन थप्पड़ो से रिसने वाले दर्द का अहसास तो आज बरसों बाद भी आह बनकर निकल आता है ... लेकिन जिंदगी तो तब भी आसान ही थी ...

ओह गिन्नू .... मेरी प्यारी बच्ची !

प्रेम बाबू ऊपर आकाश की तरफ ताकते हैं मानों सवालों के जवाब आकाश में कहीं टंगे हों।

प्रेम बाबू को याद आता है स्कूल के नतीजे आने के बाद नई क्लास में जाने की खुशी तो पता नहीं कितनी होती थी मगर नई किताबों की खुशी तो आज बरसों बाद भी दिलो दिमाग पर छाई हुई है और फिर जब पिताजी न जाने किस आर्थिक मजबूरी के अधीन पुरानी किताबें की दुकान से ले आते थे तो आंख से आंसू निकल आते थे .. किताबें वैसी पुरानी नहीं हुआ करती थी मगर दिल तो नई की आस में बैठा होता था .... कितने नमकीन होते थे वे आंसू जो पता नहीं क्यों निकलते थे, नई किताबों के अभाव में या फिर दोस्तों के बीच पुरानी किताबें लेकर जाने की शरम से ... मगर जिंदगी ? .. .. वह तो तब थी, मुश्किल नहीं लगती थी, मेरी प्यारी गिन्नू.... और फिर एक बार स्कूल से सब पिकनिक जानेवाले थे और सबको 20-20 रुपये लाने को कहा गया था मगर पिताजी ने साफ मना कर दिया था । मां ने तब शंकर जी की तिजोरी से 20 रुपये निकालकर चुपके से हाथ पर रख दिए थे। शंकर जी की तिजोरी कितनी बरकतों वाली थी और मां मुसीबत में उसकी शरण में जाया करती थी । घर के एक अंधेरे कोने में जहां ढेर सारी मूर्तियां रखी हुई थी और जहां शाम के वक्त मां जाकर दीये की रोशनी कर आती थी वहीं एक शंकर जी की तिजोरी हुआ करती थी जिसका पता और जिसकी चाबी सिर्फ मां के पास होती ।

'मां भगवान अंधेरे में क्यों रहते हैं .... ?'

आंचल पकड़े प्रेम बाबू मां से पूछा करते ... अंधेरे से डरे सहमे प्रेम बाबू ..

'बच्चा इसलिए कि हम पर नजर रख सकें कि हम क्या-क्या करते हैं ... अंधेरे में रहकर रोशनी को देखना आसान होता है न ....'

कितना यकीन था उन उत्तरों पर ... इतना कि उनके आगे कोई सवाल नहीं बन पाता था ... शायद यही यकीन जिंदगी को आसान बना देता था . .. और कभी मुश्किल नहीं लगती थी जिंदगी गिन्नी मेरी प्यारी बच्ची ....

और .... और अगर लगती भी थी तो अपने इस बाउजी को ही बता दिया होता शायद ये आसान कर देते उन मुश्किलों को .... ।

प्रेमबाबू की आंखों से परनाले बहने लग जाते और क्या हुआ था 15 साल की जिंदगी में ... गणित के बहुत से सवाल हल नहीं हो पाए थे 15 साल की उमर में .... पिताजी तो बड़े पक्के थे गणित में ... सारा मुहल्ला ही ... नहीं नहीं सारा शहर उनके गणित ज्ञान से वाकिफ था और लाभ भी उठाता था । सुबह शाम उनके इर्द-गिर्द पढ़ने वाले लड़कों की भीड़ रहा करती .. ।

'मां ये सब कौन हैं ? ....'

'ये सब गणित के सवाल लेकर आए हैं .... तुम्हारे पिताजी से हल करवाने के लिए ....'

लेकिन प्रेम बाबू को यकीन ही नहीं होता कि पिताजी गणित के सवाल हल किया करते हैं क्योंकि उनके लिए पिताजी ने गणित के सवाल कभी नहीं हल किए और हमेशा सवालों के एवज में प्रेमबाबू को कुछ थप्पड़ मिल जाया करते जो उस मासूम सी उमर में कितने डरावने और विषाद से भरे हुआ करते और जिनके ऊपर मां अपने छोटे-छोटे मगर थोड़े खुरदुरे से हाथों से प्यार की मलहम लगा दिया करती ... जिंदगी की मुश्किलें ऐसे ही आसान हो जाया करती थी गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची ... प्रेम बाबू इन सब दिनों को कहां याद कर पाए, कभी भी तो ऐसे याद नहीं किया... गिन्नी जब आसपास थी तो कहां याद आए वे सारे दिन ....!

85 बरस की उमर में उनकी आंखें मां की याद में ऐसे भर आई जैसे सब कल ही की बात हो, जैसे कल ही पिताजी ने थप्पड़ मारा हो और बस कल ही मां ने अपने छोटे और खुरदुरे से हाथों से प्यार से सहलाया हो ....

प्रेम बाबू को महसूस होता है मां बड़ी जल्दी चली गई । उन्हें लगता है मां की आंखों में व्याप्त प्रेम के अथाह सागर को वे जी भर महसूस ही नहीं कर पाए और मां चली गई । प्रेम बाबू को लगता है कि गिन्नी अगर आसपास होती तो उसे वे यह बता पाते कि जो 'है' उसे महसूस न कर पाने का कष्ट भी कितना यंत्रणादायी होता है, वे उसे बता सकते कि मां के छोटे और खुरदुरे हाथों का स्पर्श कैसे उनके गालों पर आज भी उतना ही ताजा है, और यह भी पूछते कि क्या जिंदगी हर शै से इतनी महरूम हो गई थी कि तुझे ....

'बाउजी आपका समय कैसा था ?'

गिन्नी ने एक दिन अचानक ही सवाल किया था । अचानक जैसे सीधी समतल जमीन से कोई बुलबुला फूट पड़े । प्रेम बाबू अब परतें खोल रहे हैं तो उन्हें गिन्नी का एक-एक सवाल याद आता है और हर सवाल उनके अंदर दहशत पैदा करता है। क्या उत्तर दिया था उन्होंने गिन्नी के सवाल का ! प्रेम बाबू आँखों को बार-बार झपकाते हैं मानो कोई ब्लैक बोर्ड हो सामने जिस पर सब कुछ लिखा हुआ है और .... और ... उन्हें देखने में मुश्किल हो रही हो ।

कहीं कोई नकारात्मकता तो नहीं थी उनके उत्तर में जिसे गिन्नी ने सीने से लगा लिया और ....

'हमारा समय.... हमारा समय तो गिन्नू बहुत अच्छा था इतनी भाग दौड़ कहां थी ... सादगी थी .... इतने साधन नहीं थे और थे भी तो हमारी पहुंच से बाहर थे ... गिन्नू तुम्हारा यह बाउजी पैदल स्कूल जाया करता था

तभी तो ये टांगे अब तक ऐसी मजबूत हैं ऐसी मजबूत कि चाहूं तो दौड़ में तुम्हें भी पछाड़ दूं'।

'और क्या था बाउजी ... पैदल जाते थे ... क्यों आपको छोड़ने वाला कोई नहीं था, आप अकेले चले जाते थे ... और बाउजी आपका बस्ता ... आपका बस्ता जरूर इतना भारी नहीं होता होगा ... हमारे बस्तों जैसा ... बाउजी आपने देखा है हमारा बस्ता ... कभी उठाकर देखिए इसे लेकर तो आप 10 कदम भी न चल पाएं ....'।

प्रेम बाबू के कदम थम जाते हैं .... वे गिन्नी के सर पर हाथ फेरने लगते हैं। 'हां ये तो मानना पड़ेगा .. बस्ते इतने भारी नहीं होते थे .. लेकिन ...'

'लेकिन क्या बाउजी .. आपको मानना पड़ेगा .. ये तो मानना ही पड़ेगा ..'

प्रेम बाबू उस दिन गिन्नी के सवाल पर हार मान गए थे ... चुप हो गए थे। प्रेम बाबू ग्लानि से भर उठते हैं क्यों चुप हो गए थे वे, वे क्यों नहीं बता पाए गिन्नी को कि बस्ते भारी है तो क्या हुआ जिंदगी से भारी तो नहीं ... जिंदगी तो बहुत बड़ी होती है। उन बस्तों से बहुत-बहुत बड़ी और उन बस्तों से बहुत-बहुत भारी गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची वह इतनी जल्दी हाथ से कैसे छूट सकती है ...। जिंदगी मानों कोई पजल हो जिसके टुकड़े इतने सालों में कहीं के कहीं रख दिए गए हों अलग-अलग शहरों में बिखरे हो, अलग-अलग दफ्तरों में, गांव की किसी पगडड़ी पर किसी बड़े दरख्त के नीचे पड़े हों .... और रेल के किसी डब्बे में पड़े हो ... कितने पजल हैं जिंदगी के यहां वहां बिखरे हुए ... प्रेमबाबू उन पजल को समेट रहे हैं और शक्ल बनाना चाहते हैं जिंदगी की, हर टुकड़ा तो उन्हें मिल जाता है कोई गुम नहीं हुआ है। हर टुकड़ा कहीं न कहीं मौजूद है सिर्फ उसे तलाश करने की जरूरत होती है ।

प्रेमबाबू अफसोस से भर उठते हैं कि काश गिन्नी भी समझ पाती या फिर कि वे गिन्नी को समझा पाते कि माना जिंदगी एक पजल है लेकिन उसके टुकड़े सिर्फ बिखर जाते हैं गुम नहीं होते और थोड़ी कोशिश से उन टुकड़ों को तलाश किया जा सकता है फिर उन्हें जोड़कर जिंदगी को फिर तैयार किया जा सकता है गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची ....। प्रेम बाबू शाम की लंबी सैर पर अब जाने से कतराते हैं शाम की लंबी सैर उनके रूटीन का कितना अहम् हिस्सा था और शायद उनकी तंदरूस्ती का भी ... लेकिन अब वे शाम की लंबी सैर से बचना चाहते हैं क्योंकि उन्हें लंबी सैर के दौरान वे बेंचे मिल जाया करती हैं जिन पर गिन्नी आगे-आगे दौड़कर अपने दद्दा ... नहीं नहीं दद्दा नहीं .... बाउजी को हराने की कोशिश में जाकर बैठ जाया करती थी।

'मान जाइए बाउजी आपकी टागें अब स्ट्रांग नहीं हैं 80 ईयर्स पुरानी हैं।

'हा हा हा .... 80 इयर्स पुरानी और उतनी ही मजबूत .... ये तो कछुए और खरगोश की कहानी है .... जीतेगा तो कछुआ ही हा हा हा .....'

प्रेम बाबू आवाजें बदलकर अपनी प्यारी पोती को बहलाते।

प्रेम बाबू कभी रिग्रेट करते कि कुछ कहानियां छूट गईं जो उन्होंने गिन्नी को नहीं सुनाई ... कितना कुछ बताया जा सकता था ... कितने किस्से अनकहे रह गए। प्रेम बाबू आराम कुर्सी पर छत की तरफ ताकते हैं और एक-एक अनकहे किस्से को याद करते हैं। मसलन गिन्नी को उसकी दादी के जीवन का संघर्ष सुनाया जा सकता था। कितना लाजिमी होता गिन्नी को यह बताना कि छोटी बड़ी और मंझोली उमर के लोगों के एक बड़े परिवार के बीच रहते हुए दादी ने जुनून की तरह अपनी पढ़ाई को पूरा किया था और डिग्री हासिल की थी। हां वह जुनून ही तो था, वे भी कहां पत्नी का साथ दे पाए थे। किस तरह वे परीक्षाएं पास की गई थी जिनके लिए उन्हें कोई शाबाशी नहीं दी गई थी और जिन्हें एक गैर जरूरी कसरत बताया जाता था। गिन्नी को यह जानना कितना जरूरी था कि अमला ... मतलब उसकी दादी ने कभी यह नहीं बताया था कि देखो जिंदगी अब बड़ी मुश्किल हो रही है। सच मानो गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची उन्होंने कभी ऐसा कुछ भी नहीं कहा था ...।

प्रेमबाबू को लगता है उनके लिए कितना कुछ छोड़ गई है गिन्नी सोचने के लिए रिग्रेट करने के लिए। ओह इतना सारा कुछ पहले क्यों नहीं याद आया। गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची तुमने यह सब क्यों न सुना ..... तेरे दद्दा . ... नहीं नहीं दद्दा नहीं बाउजी को पहले कभी याद ही तो नहीं आया मगर तू भी कहां सुन पाई गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची।

गिन्नी अब कहीं नहीं है तो जैसे कोई कहानी हम रिवाइंड हो रही है बार-बार हर बार कानों में चुभने वाली तीखी सी आवाज के साथ। प्रेम बाबू को लगता है इन 85 बरसों की जिंदगी में उन्होंने कभी सोचा ही नहीं कि उन्होंने क्या जिया और क्या नहीं जिया; क्या खोया और क्या पाया; नहीं नहीं असल में जिंदगी में 'कुछ नहीं 'जैसा उन्होंने कभी महसूस ही नहीं किया। बस उन्होंने पाया और जिया ही याद रखा। प्रेम बाबू को महसूस होता है कि किसे कहते हैं खोना – यह उन्होंने कभी जानने की कोशिश ही नहीं की। गणित के उन अनसुलझे सवालों में भी वे कुछ खोते कहां थे, टीचरों की रूखी सूखी घुड़कियों में और पिताजी के बेरहम थप्पड़ों में उन्होंने कुछ खोने का अहसास नहीं पाया था। हर बार जब पिताजी किसी बात के लिए मना कर देते मसलन एक नई कमीज पाने की चाहत या फिर कहीं किसी के घर देखा हुआ कोई खिलौना पाने की चाहत हो या फिर ऐसी ही कोई मामूली सी दिखने वाली चीज हो (जो उस कच्ची सी उमर में इतनी मामूली नहीं लगा करती थी) तो वे कुछ खोते कहां थे वह तो जैसे पाने की

ऊर्जा से भर जाया करते थे ।

'मां जब मैं पैसे कमाकर लाऊंगा तो तेरी शंकर की तिजोरी को गले तक भर दूंगा .... तब तुम इससे निकाल-निकालकर खूब खर्च करना मां' प्रेम बाबू को याद आता है ऐसे ही कुछ कहा था उन्होंने एक दफे अंधेरी कोठरी में मां के पास बैठकर । उस दिन भी मां अपनी या किसी और की जरूरत के लिए शंकर की तिजोरी से पैसे निकाल रही थी ।

मां ने उन्हें गले से लगा लिया था और रोने लग गई थी । मां को उन्होंने बहुत कम रोते हुए देखा था शायद ही कभी सिवाय एक या दो बार के । लेकिन मां रोती थी तो लगता मानो कोई दिल पर हाथ रखकर उसे धीरे-धीरे निचोड़ रहा हो और उससे होनेवाली पीड़ा समूचे वजूद पर और समूचे कालखंड में पसर जाती थी । मगर ... मगर गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची जिंदगी फिर भी थमी नहीं थी ... जिंदगी फिर भी कहीं गुम न हुई थी .... चलती रही थी ... जिंदगी फिर भी कभी मुश्किल नहीं लगी थी ... !! प्रेमबाबू को महसूस होता है कि ये सारी बातें .... जिंदगी के सारे प्रीवियस रेकार्ड जो उन्हें अब तक बेमानी लगते थे कितने जरूरी थे और प्रेम बाबू को लगता है कि गिन्नी को यह सब बताया जाना चाहिए था चाहे जिस भी तरीके से बताया जाता मगर कितना जरूरी था यह सब बताया जाना।

'बाउजी आप कहां चले गए थे .... कितनी दफे कहा है अंधेरा होने से पहले घर आ जाया करो ....'

प्रेम बाबू शाम को सैर से लौटे थे और बेटा और बहू दोनों उन्हें उलाहना सा दे रहे थे

'अंधेरे से पहले .... हां ठीक ही कहते हो बेटा .... अंधेरे से पहले रोशनी होती है .... अंधेरे के बाद ..... । अंधेरे के बाद भी तो रोशनी होती है न .... '

लेकिन यह सब हम तुम्हें कहां बता पाए गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची .... तुम अंधेरे में ही जीती रहीं और अंधेरे में ही गुम हो गई गिन्नू मेरी प्यारी मासूम बच्ची .... तुम कहां हो गिन्नी मैं तुम्हें देख नहीं पाता तो मेरी आंखें कमजोर हो जाती हैं ... उनकी रोशनी चली जाती है .. तुम सुनती नहीं तो मेरी आवाज नहीं निकलती.... गिन्नू तुम बाते नहीं करती तो मैं सुन नहीं पाता तुम आसपास चलती नहीं तो मैं चल नहीं पाता... मैं बेजा ही कहता रहा कि ये 80 बरस तक साथ देने वाली टांगें कितनी मजबूत हैं .... और ये भी कि मेरी मेमोरी भी कितनी मजबूत है .. गिन्नू मेरी मेमोरी तो खत्म हो रही है अब .... सब कुछ तुम्हारे मौजूद रहने पर ही था गिन्नू मेरी प्यारी बच्ची .. लौट आओ गिन्नू अंधेरे से पहले लौट आना होता है गिन्नू ...

'बाउजी.... आपने कुछ कहा ...'

'नहीं तो.... एक बात कहूं बेटा बुरा तो नहीं मानोगे और तुम भी सुमन.. .. तुम दोनों मेरी एक बात मान लो .... कहो न मानोगे ...'

'क्या बात है बाउजी'

बेटे ने चिंतित भाव के साथ प्रेमबाबू के दोनों हाथों को मुट्ठी में बांध लिया था।

सुमन ने कंधे से पकड़ कर बाउजी को कुर्सी पर बिठा दिया 'बात क्या है बाउजी... वे दोनों उद्विग्न हो रहे थे जैसे एक बेशकीमती चीज के गुम हो जाने पर दूसरी के गुम होने के भय से त्रस्त हो गए हों ....

'तुम दोनों मुझे अब से बाउजी कहकर न पुकारना .... कुछ और पुकार लेना.... बहुत से शब्द हैं .... पिताजी .... पापा .... या डैडी या फिर कोई तीसरा चौथा शब्द ढूंढ लेना ... पर ये बाउजी .... समझ रहे हो न .. .. इसे अब रहने दो' ।

बरामदे की दीवारें तंग हो रही थी । ऐसा लगता था वहां तीन लोगों के लायक ऑक्सीजन नहीं रह गया था लेकिन फिर भी वे सांसे ले रहे थे ।

श्रीमती ममता शर्मा

कार्यालयीन टिप्पणियाँ

अनुमोदन प्रदान कर दिया जाए	Approval may be accorded
पद की हैसियत से	By virtue of office
जाँच की और सही पाया	Checked and found correct
जवाब तलब किया जाए	Explanation may be called for
अनुकूल कार्रवाई के लिए	For favourable action
कार्रवाई के दौरान	In the course of action
मंजूर किया जाए	May be sanctioned
यथापेक्षा पुनः प्रस्तुत है	Resubmitted as desired
पूरी योग्यता से	To the best of ability
कृपया निपटान शीघ्र करें	Kindly expedite disposal

“ मैं भारत हूं। मेरा शरीर मानों उसकी भूमि है। मेरे दो पैर, मलाबार और कोरमण्डल है। मेरे-चरण, कन्याकुमारी हैं। मेरा सिर हिमालय है। गंगा और ब्रह्मपुत्र प्रचण्ड नदियां मेरे केश है। राजस्थान और गुजरात के मरूस्थल मानों मेरा हृदय है। पूर्व और पश्चिम दिशाओं में मेरी भुजाएं फैली है। ”

स्वामी रामतीर्थ

सोलर प्रेस - 9839030542

संपर्क
राजभाषा प्रकोष्ठ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष-0512-259-7122
ईमेल-kbalani@iitk.ac.in, vedps@iitk.ac.in, sunitas@iitk.ac.in
वेब-http://www.iitk.ac.in/infocell/iitk/newhtml/Antas/

अभिकल्प (Design) - सुनीता सिंह